संलग्नक 1: बेसलाइन

पुस्तकालय

प्रस्तावना

पुस्तकालय ज्ञान के प्रसार में प्रमुख भूमिका निभाते हैं और ज्ञानवान अर्थव्यवस्था का निर्माण करने में अत्यधिक महत्वपूर्ण होते हैं। ऐसे तंत्र और संस्थान स्थापित किए जाने की जरूरत है जो पुस्तकालयों तथा सूचना प्रणाली (एलआईएस) परिदृश्य में प्रतिमानपरक बदलाव ला सकें। आज के समय में पुस्तकालयों को दो अलग–अलग भूमिकाएं निभानी होती है–सूचना और ज्ञान के एक स्थानीय केन्द्र के रूप में काम करना और राष्ट्रीय तथा वैश्विक ज्ञान का मुख्य–द्वार बनना। इस संभावना की पूर्ति के लिए समूची एलआइएस को चुस्त बनाए जाने की जरूरत है––मौजूदा पुस्तकालयों को अवश्य ही अपने संग्रह, सेवाओं और सुविधाओं का आधुनिकीकरण करना होगा तथा अधिक सक्रिय बनना होगा और अन्य संस्थानों तथा एजेंसियों के साथ सहयोग करना होगा।

मौजूदा परिदृश्य

डाटा: भारत में वस्तुतः काम कर रहे पुस्तकालयों का कोई प्राधिकृत डाटा उपलब्ध नहीं हैं। सारी सांख्यिकीय जानकारी का अंदाजा सर्वथा अनुमान कार्य पर लगाया गया है। इसके अलावा ऐसे संस्थान हैं जोकि किसी बेंचमार्क अथवा मानक के बिना पुस्तकालयों के रूप में कार्य कर रहे हैं। इसलिए एक राष्ट्रव्यापी सर्वेक्षण के माध्यम से पुस्तकालयों की एक राष्ट्रीय गणना किए जाने की जरूरत है। पुस्तकालयों का गणना डाटा और उनकी मौजूदा स्थिति भावी नियोजन के लिए प्राथमिक डाटा उपलब्ध कराएंगे।

तालिका 1: राजा राम मोहन फाउंडेशन द्वारा कवर किए गए पुस्तकालय

स्तर	संख्या
राज्य केन्द्रीय पुस्तकालय	28
मंडल और जिला पुस्तकालय	451
उप–मंडल/ताल्लुका/तहसील पुस्तकालय	501
कस्बा और ग्रामीण पुस्तकालय	30134
नेहरू युवा केन्द्र	272
जवाहर बाल भवन	49
अन्य	128
योग	31563

स्रोतः राजा राम मोहन पुस्तकालय फाउंडेशन

प्रबंध और स्तर: ज्ञान और संसाधनों की सुलभता उपलब्ध कराने के लिए प्रत्येक पुस्तकालय को वैविध्यपूर्ण प्रयोक्ता समुदाय की जरूरतों को पूरा करने के लिए अनेक प्रकार की सेवाएं उपलब्ध करानी चाहिए। इसके अलावा यह भी जरूरी है कि उसके पास प्रयोक्ता समुदाय के लिए सु–चयनित संग्रह भी होना चाहिए। बदली हुई परिस्थितियों में विभिन्न प्रकार के पुस्तकालयों तथा पुस्तकालय के विभागों तथा सूचना विज्ञान के लिए विभिन्न प्रकार की जनशक्ति जरूरतों का आकलन करना तथा पुस्तकालय स्टाफ को समुचित रूप से प्रशिक्षित करना भी जरूरी है।

शिक्षा और अनुसंधान: पुस्तकालय तथा सूचना विज्ञान शिक्षा और अनुसंधान स्वतंत्रता–पूर्व समय से मौजूद रहे हैं। इस क्षेत्र में उच्चतर अध्ययन के लगभग 135 विश्वविद्यालय तथा संस्थान हैं। लेकिन अधिकांश विश्वविद्यालय तथा संस्थान अपने आपको एलआईएस क्षेत्र में हुए बदलावों के अनुरूप नहीं बना सके हैं।

वित्तपोषण: दसवीं योजना के 131.05 करोड़ रुपए के परिव्यय में से 121.23 करोड़ रुपए का खर्च हो सका जोकि 7 प्रतिशत की गिरावट का परिचायक है। केवल निर्धारित अवधि के भीतर मौजूदा पुस्तकालयों का स्तरोन्नयन करने के लिए ही नहीं अपितु पुस्तकालयों के समक्ष इस समय जो वित्तीय कठिनाइयां पेश आ रही हैं, उन पर काबू पाने के लिए भी एक केन्द्रीय पुस्तकालय निधि स्थापित किए जाने की जरूरत है। इसके अलावा देश के विभिन्न भागों में पुस्तकालय और सूचना सेवाएं विकसित करने के लिए सरकारी–निजी भागीदारी को प्रोत्साहित किया जा सकता है।

तालिका 2: भारत में पुस्तकालयों की संख्या (अनुमानित संख्या 1996–97)

सार्वजनिक पुस्तकालय	54845
विश्वविद्यालय/सम–विश्वविद्यालय पुस्तकालय	267
कालेज पुस्तकालय	8000
विज्ञान और प्रौद्योगिकी पुस्तकालय	1200
सामाजिक विज्ञान पुस्तकालय	450
सरकारी विभाग पुस्तकालय	800
कला, संस्कृति तथा मानविकी पुस्तकालय	500
स्कूल पुस्तकालय (उच्च माध्यमिक/माध्यमिक/प्राथमिक तथा उच्च प्राथमिक)	404128

स्रोतः लाइब्रेरीज इन सोसायटी : ऐन इनसाइडर्स व्यू, पी. आर. गोस्वामी

तालिका 3: भारत में मौजूदा पुस्तकालय संघ

इंडियन नेशनल डिजिटल लाइब्रेरी इन इंजीनियरिंग साइंस एंड टेक्नोलाजी (इंडेस्ट) कंसोर्टियम	164 संस्थानों की सदस्यता–38 कोर संस्थान मानव संसाधन विकास मंत्रालय, भारत सरकार द्वारा वित्तपोषित, 44 संस्थान अखिल भारतीय तकनीकी शिक्षा परिषद (एआईसीटीई) द्वारा वित्तपोषित तथा 82 स्वावलंबी संस्थान
वैज्ञानिक और औद्योगिक अनुसंधान (सीएसआईआर) ई–पत्रिकाएं संघ	एसआईआर द्वारा अपनी सभी 44 प्रयोगशालाओं के लिए वित्तपोषित
विश्वविद्यालय अनुदान आयोग (यूजीसी) ई–पत्रिकाएं संघ	100 विश्वविद्यालयों के लिए यूजीसी द्वारा वित्तपोषित और इसका विस्तार अन्य विश्वविद्यालयों तथा कालेजों तक किया जा रहा है
डीएई ई–पत्रिकाएं संघ	परमाणु ऊर्जा विभाग के अधीन 36 संस्थानों के लिए

स्रोतःहायर एजूकेशन इन इंडिया, पवन अग्रवाल, आईसीआरआईईआर 2006

चित्र 1:पुस्तकालयः दसवीं पंचवर्षीय योजना का परिव्यय तथा व्यय

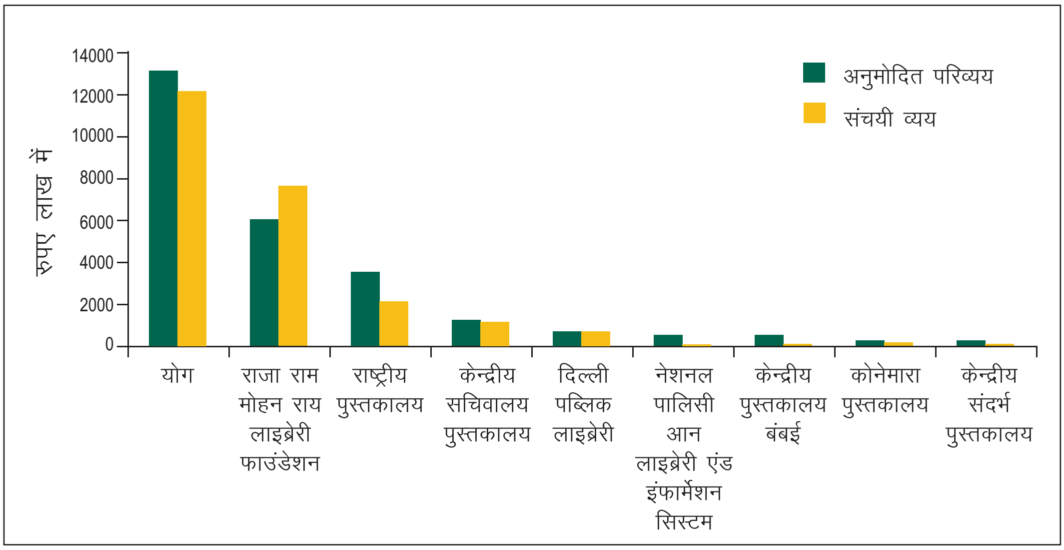

स्रोतः कला और संस्कृति पर कार्यकारी दल, 11वीं पंचवर्षीय योजना, योजना आयोग

स्कूली शिक्षा

प्रस्तावना

एक ऐसा प्रासाद निर्मित करने के लिए जिसके ऊपर ज्ञानवान समाज का निर्माण किया जा सके, स्कूली शिक्षा में सुधार महत्वपूर्ण है। जबकि भारत ने स्कूली शिक्षा में उल्लेखनीय उन्नति की है, प्रारंभिक शिक्षा के सर्वसुलभीकरण का लक्ष्य अभी भी पूरा नहीं हो सका है। राज्यों, ग्रामीण और शहरी क्षेत्रों, लैंगिक तथा विभिन्न आर्थिक वर्गों के बीच स्कूली शिक्षा की सुलभता को लेकर व्यापक विषमताएं भी बनी हुई हैं। इसके अलावा अध्यापक प्रशिक्षण, पाठ्यचर्या, शिक्षाशास्त्र, स्कूली आधारिक–तंत्र तथा अधिगम उपलब्धियों जैसे गुणवत्ता के मुद्दों की ओर तत्काल ध्यान दिए जाने की जरूरत है। साथ ही स्कूली शिक्षा के लिए संसाधन आबंटन बढ़ाए जाने की भी तत्काल जरूरत है।

मौजूदा परिदृश्य

साक्षरताः 2001 की जनगणना के अनुसार भारत में साक्षरता दर 64.8 प्रतिशत थी जबकि एनएसएस के 61वें चक्र सर्वेक्षण रिपोर्ट के अनुसार 2004–05 के दौरान साक्षरता दर 67.3 प्रतिशत थी। इसके अलावा साक्षरता को लेकर लैंगिक अंतराल अनुमानतः 20 प्रतिशत है।

स्कूलः देश में प्राथमिक स्कूलों की संख्या जो 2001–02 में 6.64 लाख थी वह 2005–06 में बढ़कर 7.7 लाख हो गई। इसी अवधि के दौरान उच्च प्राथमिक स्कूलों की संख्या 2.20 लाख से बढ़कर 2.9 लाख तक पहुंच गई।

तालिका 4: स्कूलों की संख्या (लाख में) 2005–06

प्राथमिक	7.7
उच्च प्राथमिक	2.9
माध्यमिक / उच्च माध्यमिक	1.6
योग	12.2

स्रोतः एजूकेशनल स्टैटिस्टिक्स एट ए ग्लांस 2005–06 एमएचआरडी

नामांकनः प्राथमिक स्तर पर कुल नामांकन जो 1950–51 में 19.2 मिलियन था, वह 2004–05 में सात गुना बढ़कर 130.8 मिलियन तक पहुंच गया। उच्च प्राथमिक स्तर नामांकन जो 1950–51 में 3.1 मिलियन था, 2004–05 में उसमें 17 गुना वृद्धि हुई और वह 51.2 मिलियन हो गया। माध्यमिक स्तर पर नामांकन जो 1950–51 में 1.5 मिलियन था वह 2004–05 में 25 गुना बढ़कर 37.1 मिलियन तक पहुंच गया। तथापि, डीएसआई अध्ययन (2004–05) के अनुसार 581 में से 180 जिलों में प्राथमिक स्तर पर नामांकन में गिरावट आई।

नामांकन दरें बिहार, अरुणाचल प्रदेश, झारखंड, उत्तर प्रदेश, राजस्थान तथा मध्य प्रदेश में विशेष रूप से कम हैं जबकि समग्र नामांकन दर 80 प्रतिशत से कम बनी हुई हैं। संघशासित क्षेत्रों, पूर्वोत्तर राज्यों, केरल को छोड़कर और कुछ हद तक

चित्र 2: संगत आयु–वर्ग में प्रत्येक 1000 छात्रों के पीछे स्कूलों की संख्या

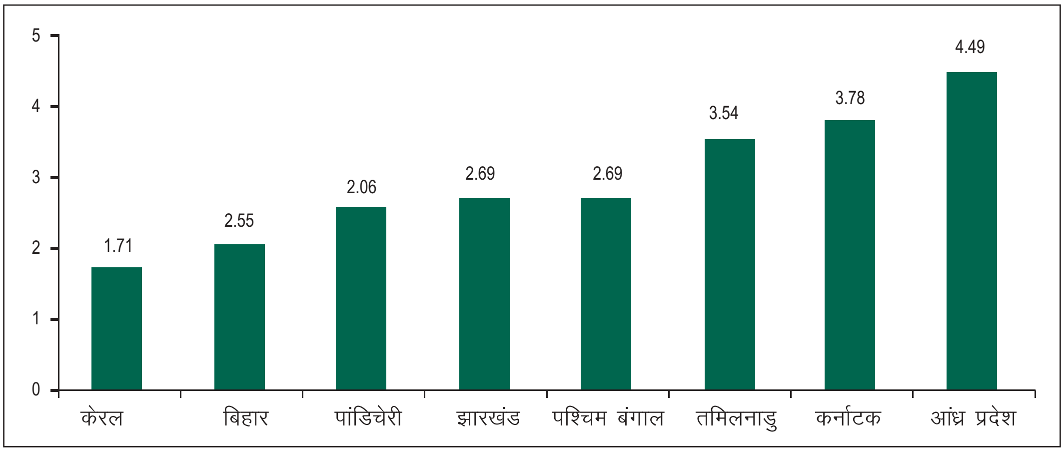

स्रोतः ऐलीमेंट्री एजूकेशन इन इंडिया, एनालिटिकल रिपोर्ट एनयूईपीए 2005–06

चित्र 3: अवस्था–वार नामांकन (2005–06)

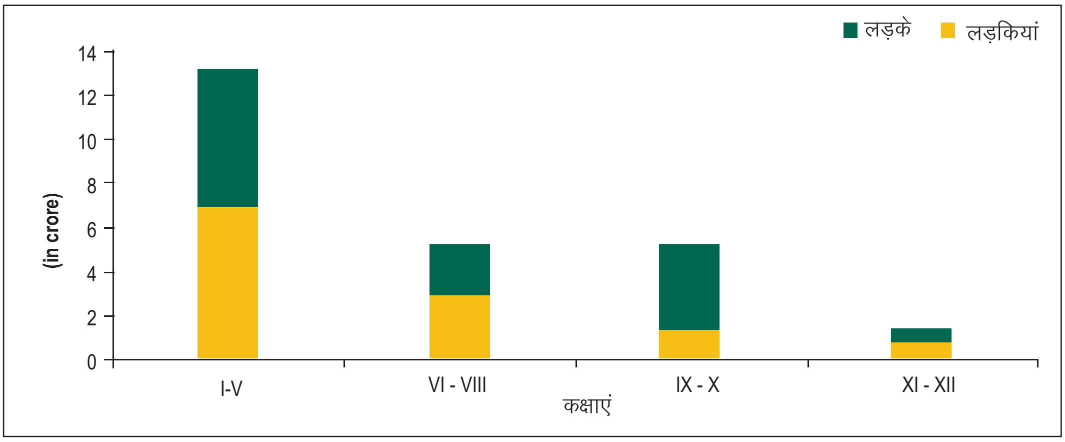

स्रोतः नेशनल लेवल स्टैटिस्टिक्स 2005–06 एमएचआरडी

चित्र 4: संगत आयु–वर्ग में ऐसे छात्रों का प्रतिशत जो दाखिल नहीं है

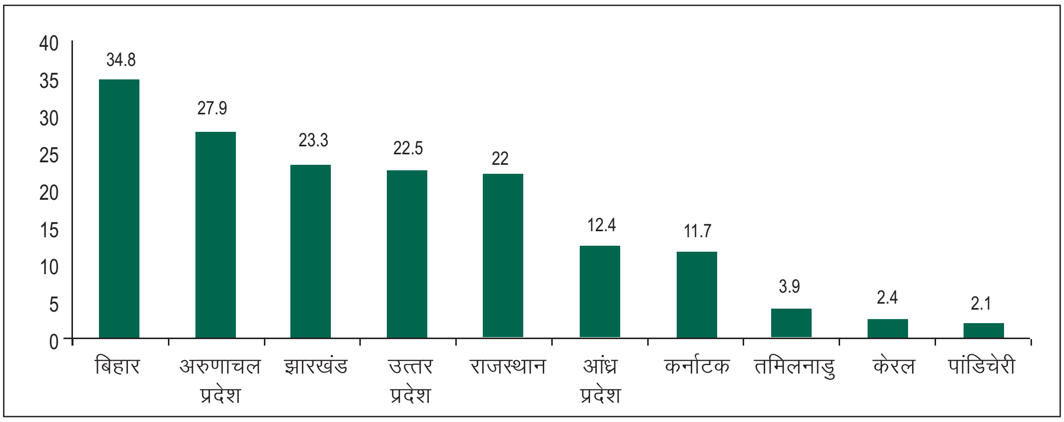

स्रोतः ऐलीमेंट्री एजूकेशन इन इंडिया, एनालिटिकल रिपोर्ट एनयूईपीए 2005–06

तमिलनाडु में ग्रामीण–शहरी के बीच व्यापक विषमताएं है। सकल न्यून उपस्थिति दरों वाले राज्यों में लैंगिक विषमताएं सबसे तेज दिखती हैं।

1980–81 और 2004–05 के बीच स्कूली शिक्षा के प्राथमिक (I-V), उच्च प्राथमिक (VI-VIII) तथा माध्यमिक/उच्च माध्यमिक (IX-XII) अवस्थाओं में अनुसूचित जातियों के कुल नामांकन में क्रमशः 2.25, 3.91 और 4.92 गुना की वृद्धि हुई। 1980–81 और 2004–05 के बीच स्कूली शिक्षा के प्राथमिक, उच्च प्राथमिक तथा माध्यमिक/उच्च माध्यमिक अवस्थाओं में अनुसूचित जनजातियों के कुल नामांकन में क्रमशः 2.94, 5.62 और 6.33 गुना की वृद्धि हुई। इसके अलावा 2005–06 में 604 जिलों का औसत प्राथमिक कक्षाओं में 0.92 का तथा उच्च प्राथमिक कक्षाओं में 0.84 का लैंगिक समानता सूचकांक (जीपीआई) दर्शाता है जबकि 2004–05 में इस आशय का सूचकांक 0.91 तथा 0.83 था, 2003–04 में प्राथमिक तथा उच्च प्राथमिक नामांकन में जीपीआई क्रमशः 0.90 और 0.82 था। हमारे प्रारंभिक स्कूल बच्चों का गठन यह दर्शाता है कि 9.97 प्रतिशत मुस्लिम बच्चे, 9.54 प्रतिशत एसटी बच्चे, 8.17 प्रतिशत एससी बच्चे तथा 6.97 प्रतिशत ओबीसी बच्चे स्कूलों से बाहर बने हुए थे और ऐसे छात्रों की बहुलता (68.7 प्रतिशत) पांच राज्यों में अर्थात बिहार (23.6 प्रतिशत), उत्तर प्रदेश (22.2 प्रतिशत), पश्चिम बंगाल (9 प्रतिशत), मध्य प्रदेश (8 प्रतिशत) तथा राजस्थान (5.9 प्रतिशत) में केन्द्रित थी।

अधबीच शिक्षा छोड़ने वाले: अधबीच शिक्षा छोड़ने वाले बच्चों की दरें ऐसे छात्रों के प्रतिशत की परिचायक है जो किसी स्कूल वर्ष में किसी कक्षा अथवा स्तर पर शिक्षा बीच में छोड़ देते हैं। प्राथमिक कक्षाओं में अधबीच शिक्षा छोड़ने वाले बच्चों की दर जो 1960–61 में 64.9 प्रतिशत थी, वह 2004–05 में घटकर 29.00 प्रतिशत रह गई। उच्च प्राथमिक कक्षाओं में अधबीच शिक्षा छोड़ने वाले बच्चों की दर जो 1960–61 में 78.3 प्रतिशत थी वह 2004–05 में घटकर 50.84 प्रतिश रह गई है। इसी प्रकार माध्यमिक कक्षाओं में अधबीच शिक्षा छोड़ने वाले बच्चों की दर जो 1980–81 में 82.5 प्रतिशत थी, वह 2004–05 में घटकर 61.92 प्रतिशत रह गई अर्थात बच्चों को शिक्षा में बनाए रखने की दर में सुधार हुआ। प्राथमिक स्तर पर अधबीच शिक्षा छोड़ने वाले एससी (34.2 प्रतिशत) तथा एसटी (42.3 प्रतिशत) की दरें, राष्ट्रीय औसत (29 प्रतिशत) के मुकाबले बहुत ऊंची बनी हुई है।

तालिका 5: स्कूलों की कोटि के अनुसार अध्यापकों की संख्या और छात्र:अध्यापक अनुपात

स्कूल को कोटि	स्कूलों की संख्या (लाख में)	प्रशिक्षित अध्यापकों का प्रतिशत	प्रत्येक 100 पुरुष अध्यापकों के पीछे महिला अध्यापक	छात्र अध्यापक अनुपात
प्राथमिक	21.8	86	65	46
उच्च प्राथमिक	16.7	87	67	34
हाई स्कूल	11.2	89	61	32
उच्च/उच्च माध्यमिक	10.3	90	62	34

स्रोतः नेशनल लेवल स्टैटिस्टिक्स 2005–06 एमएचआरडी

अध्यापकः प्राथमिक स्कूलों में अध्यापकों की संख्या जो 1950–51 में 5.38 लाख थी वह 2004–05 में बढ़कर 21.6 लाख हो गई अर्थात चार गुना से अधिक की वृद्धि हुई। तथापि, जैसाकि अध्यापक छात्र अनुपात से स्पष्ट होता है विशाल पैमाने पर बढ़ रही छात्रों की संख्या की जरूरतों को पूरा करने के लिए अध्यापकों की संख्या काफी नहीं है।

वर्ष 1950–51 में प्राथमिक स्तर पर छात्र–अध्यापक अनुपात 1:24, मिडिल स्कूलों में 1:20 तथा उच्चतर/उच्च माध्यमिक स्कूलों में छात्र–अध्यापक अनुपात 1:21 था। 2004–05 तक यह अनुपात प्राथमिक स्कूलों के मामले में बढ़कर 1:46, उच्च माध्यमिक स्कूलों के मामले में 1:35 और माध्यमिक/उच्च माध्यमिक स्कूलों के मामले में बढ़कर 1:33 हो गया। हालांकि स्वतंत्रता के बाद शैक्षिक संस्थानों की संख्या में और अध्यापकों की संख्या में भी अतिशय वृद्धि हुई है, उच्चतर छात्र–अध्यापक अनुपात यह दर्शाता है कि प्रत्येक स्तर पर नामांकन में वृद्धि अध्यापकों की संख्या में हुई वृद्धि से बढ़कर रही है। विभिन्न स्तरों पर बढ़ा हुआ नामांकन और अधिक संख्या में शैक्षिक संस्थान खोले जाने और साथ ही शिक्षा के स्तर में सुधार लाने के लिए और अधिक अध्यापक नियुक्त किए जाने की जरूरत रेखांकित करता है।

अध्यापक प्रशिक्षण कार्यक्रमः उत्तम अध्यापक शिक्षा के लिए अध्यापक प्रशिक्षण को एक महत्वपूर्ण इन्पुट स्वीकार किया गया है। तथापि, भारत में अध्यापक प्रशिक्षण की स्थिति गंभीर चिंता का विषय बनी हुई है। डीआईएसई आंकड़ों के अनुसार 2005–06 में केवल 33 प्रतिशत अध्यापकों ने सेवाकालीन प्रशिक्षण प्राप्त किया। 2002 में 65467 पुरुष अध्यापकों ने और 67096 महिला अध्यापकों ने अध्यापक प्रशिक्षण पाठ्यक्रमों के लिए दाखिला लिया। संप्रति, सेवा–पूर्व तथा सेवाकालीन प्रशिक्षण के लिए देश के भीतर 571 डाइट तथा डीआरसी, 104 उन्नत शिक्षण कालेज तथा 31 उन्नत शिक्षा अध्ययन संस्थान काम कर रहे हैं।

अध्यापकों की अनुपस्थितिः स्कूली शिक्षा के स्तर में सुधार के मार्ग में अध्यापकों की अनुपस्थिति को एक प्रमुख बाधा के रूप में माना गया है। उत्तर भारत के 5 राज्यों के 242 गांवों में किए गए प्रोब सर्वेक्षण से यह पता चला कि अन्वेषकों के दौरों के समय लगभग आधे स्कूलों में शिक्षण की कोई गतिविधि नहीं थी। यह उल्लेख्य है कि यह स्थिति उन मामलों में भी देखने में आई जहां स्कूल आधारिक–तंत्र (क्लासरूमों, शिक्षण सहायक सामग्री की संख्या तथा यहां तक कि अध्यापक–छात्र अनुपात की दृष्टि से भी) अपेक्षतया बेहतर था।

आधारिक–तंत्रः भारत में स्कूलों में बुनियादी आधारिक–तंत्र की अत्यधिक कमी है। उदाहरण के लिए प्रोब (1999) सर्वेक्षण ने सरकारी स्कूलों के संबंध में यह स्थिति पाई (क) नमूने के स्कूलों में से केवल एक–चौथाई स्कूलों में कम से कम दो अध्यापक, प्रत्येक मौसम के लिए अनुकूल दो क्लासरूम तथा कुछ शिक्षण सहायक सामग्री थी (ख) अन्वेषक के दौरे के समय एक–तिहाई मुख्याध्यापक अनुपस्थित थे, एक–तिहाई स्कूलों में केवल एक अध्यापक उपस्थित था और लगभग आधे स्कूलों में कोई शिक्षण गतिविधि नहीं थी (ग) अनेक स्कूलों में कक्षा छात्रों की बाकायदा उपेक्षा की जा रही थी। इसी प्रकार डीआईएसई सर्वेक्षण ने यह पाया कि केवल लगभग 50 प्रतिशत स्कूलों में चारदीवारी थी, 33 प्रतिशत स्कूलों में बिजली का कनेक्शन था और 52 प्रतिशत स्कूलों में खेल के मैदान थे। ये बातें स्कूली प्रक्रिया में गंभीर कमियों की परिचायक हैं।

प्रबंधः संप्रति, 90 प्रतिशत से अधिक प्राथमिक स्कूल, 72 प्रतिशत उच्च प्राथमिक स्कूल, 39 प्रतिशत माध्यमिक स्कूल सरकारी अथवा स्थानीय निकायों के स्वामित्व के हैं। भारत में निजी गैर–मान्यताप्राप्त स्कूलों की संख्या में वृद्धि के संकेत हैं। डीआईएसई विश्लेषणात्मक रिपोर्ट के अनुसार 2005–06 में 63,411 तथा 1,26,110 स्कूलों का प्रबंध क्रमशः निजी सहायताप्राप्त तथा निजी गैर–सहायताप्राप्त प्रबंधकों के हाथों में था। दोनों मिलकर ये कुल मिलाकर 1,89,521 स्कूल (16.86 प्रतिशत) चलाते हैं। ऐसा साक्ष्य उपलब्ध है जो यह सुझाता है कि निजी स्कूल ऐसे क्षेत्रों में केन्द्रित है जहां सरकार द्वारा वित्तपोषित स्कूल काम नहीं कर रहे हैं। हालांकि निजी स्कूलों के छात्रों की स्थिति आर्थिक दृष्टि से बेहतर होती हैं, तो भी गरीब परिवारों से दाखिलों की दर में भी क्रमिक वृद्धि हुई है। भारत के एमआईएमएपी सर्वेक्षण के निष्कर्षों से ऐसा पता चलता है कि स्कूलों में दाखिल 5–10 वर्ष की आयु के कुल बच्चों में से निर्धनता की रेखा से नीचे के 14.8 प्रतिशत बच्चे निजी स्कूलों में (ग्रामीण भारत में 8 प्रतिशत तथा शहरी भारत में 36

प्रतिशत) पढ़ते थे। 11–14 वर्ष तथा 15–17 वर्ष के लिए तदनुरूपी प्रतिशत क्रमशः 13.8 प्रतिशत तथा 7 प्रतिशत है (प्रधान तथा सुब्रमण्यम, 2000)। इसके अलावा निजी स्कूलों में निर्धन पृष्ठभूमि के बच्चों में बहुलता लड़कों की है।

पाठ्यचर्या, शिक्षाशास्त्र और अधिगम उपलब्धियां: प्रथम द्वारा 2006 में किए गए *एनुअल स्टेटस आफ एजूकेशन रिपोर्ट* (एएसईआर) नामक एक अखिल भारतीय अध्ययन से यह पता चला कि प्राथमिक स्कूलों के बच्चों में गणित और पठन के स्तर आश्चर्यजनक रूप से निम्न स्तर के रहे हैं। 7–14 आयु वर्ग के लगभग 35 प्रतिशत एक भी पैराग्राफ नहीं पढ़ सके (कक्षा 1 स्तर का काठिन्य) तथा लगभग 60 प्रतिशत बच्चे एक कहानी नहीं पढ़ सके (कक्षा 2 स्तर)। सरकारी स्कूलों में कक्षा II-IV के 49.6 प्रतिशत बच्चे घटाने में असमर्थ रहे (स्तर 1) तथा 77.8 प्रतिशत बच्चे भाग के सवाल नहीं कर सके। निजी स्कूलों में 37.9 घटाने में असमर्थ रहे (स्तर 1) तथा 66.7 प्रतिशत बच्चे भाग के सवाल नहीं कर सके (स्तर 2)।

तमिलनाडु, कर्नाटक और गुजरात (जहां स्कूल काम करते हैं और प्रावधान संबंधी सभी संकेतक उत्तम हैं) की स्थिति बिहार और छत्तीसगढ़ (जहां अध्यापक–छात्र अनुपात, अधबीच शिक्षा छोड़ने वाले बच्चों की दरें बहुत ऊंची हैं और जहां स्कूली सुविधाएं अल्प हैं) की तुलना में खराब है। विशेष रूप से ग्रामीण, आर्थिक दृष्टि से कमजोर तथा सामाजिक दृष्टि से वंचित बच्चों के बीच फेल हो जाने की उच्चतर दरों को ध्यान में रखते हुए मूल्यांकन और परीक्षा की समूची प्रणाली की गहन समीक्षा किए जाने की जरूरत बनती है।

यह व्यापक रूप से स्वीकार किया जाता है कि पाठ्यपुस्तकों से रट्टा लगाकर सीखने की बजाय बुनियादी कौशल विकसित

चित्र 5: बुनियादी सुविधाओं से युक्त स्कूलों का प्रतिशत

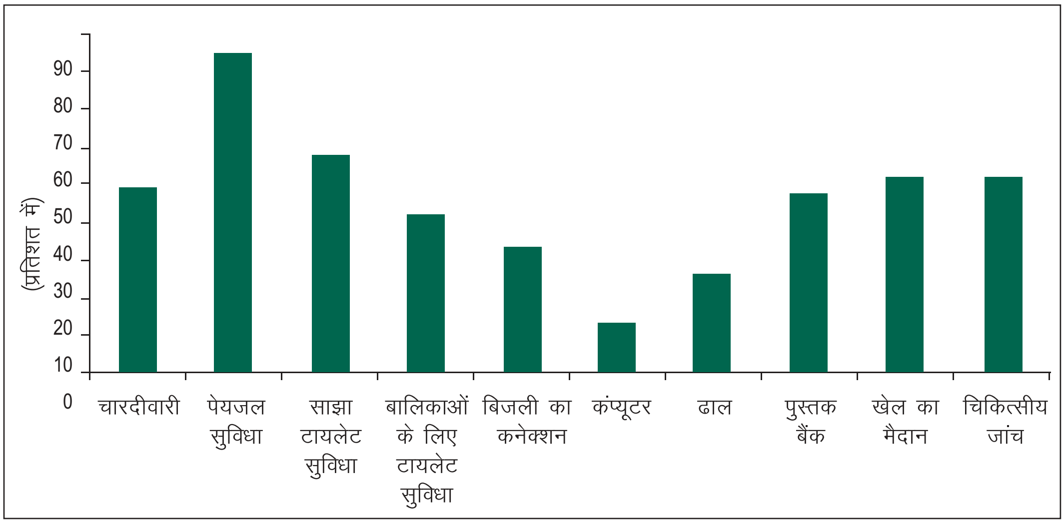

स्रोतः एलिमेंटरी एजूकेशन इन इंडिया, एनालिटिकल रिपोर्ट, 2006–07

चित्र 6: स्कूलों का प्रबंध–वार प्रतिशत

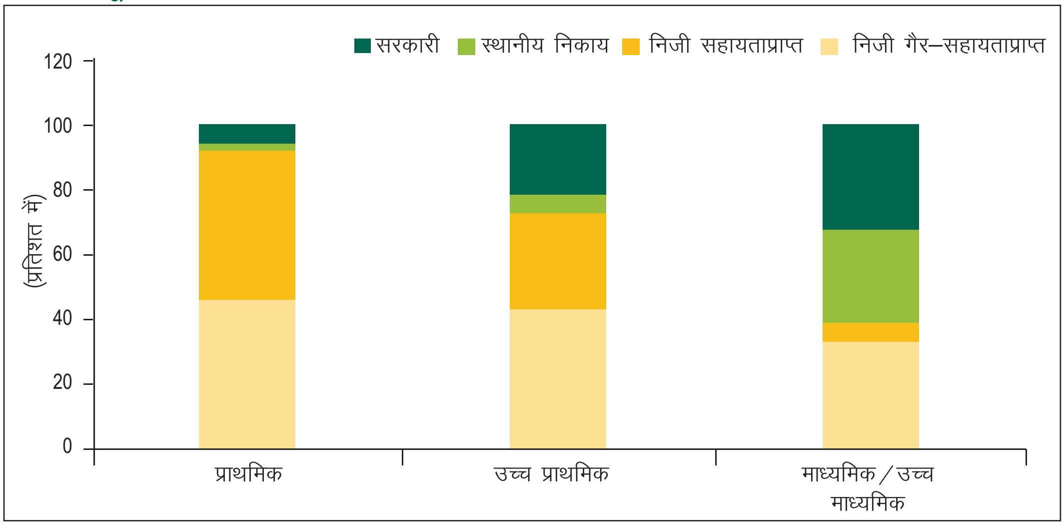

स्रोतः नेशनल लेवल स्टैटिस्टिक्स 2005–06 एमएचआरडी

चित्र 7: ऐसे बच्चों का प्रतिशत (कक्षा I से VIII) जो निम्न काम नहीं कर सकते

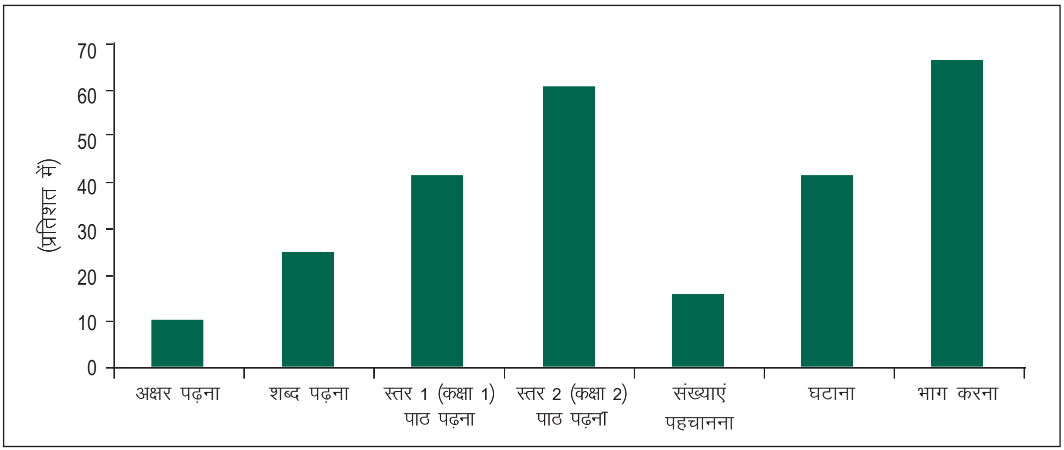

स्रोतः एनुअल स्टेटस आफ एजूकेशन रिपोर्ट (ग्रामीण) 2006

चित्र 8: जीडीपी के प्रतिशत के रूप में शिक्षा पर खर्च

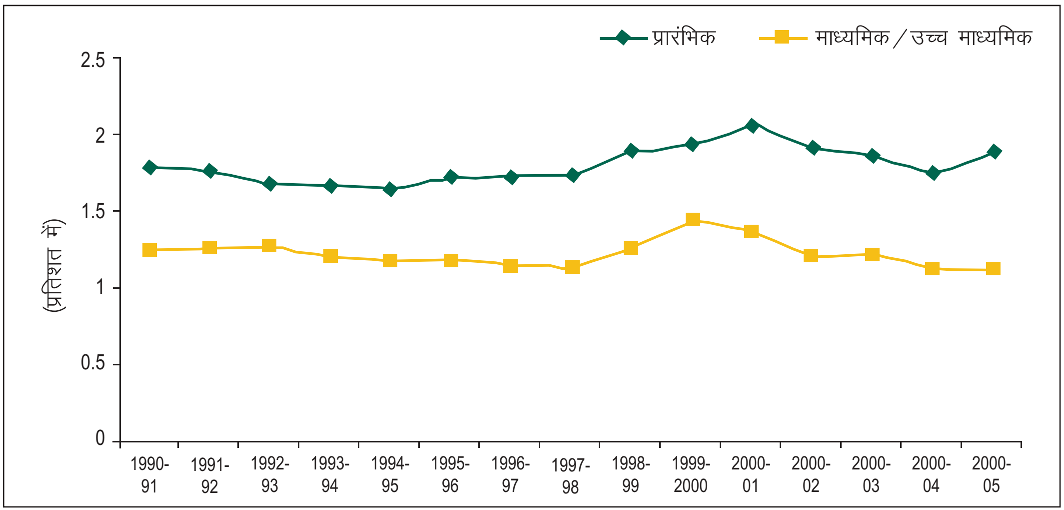

स्रोतः एमएचआरडी

करने तथा वास्तविक स्थितियों में अपने अधिगम को लागू करने में छात्रों की योग्यता पर बल दिया जाए। इसके साथ–साथ सृजनात्मकता, समस्या समाधान करने की योग्यता तथा छात्रों के अपने अनुभवों पर आधारित ज्ञान के निर्माण को प्रोत्साहन दिए जाने की जरूरत है। प्राथमिक स्तर पर जवाबदेही लागू करने तथा शिक्षण में सुधार के लिए अन्य उपाय निर्मित करने के बारे में सोचा जा सकता है। राष्ट्रीय शिक्षा नीति (एनपीई) 1986 में यह कहा गया था कि परीक्षा प्रणाली को नया रूप दिया जाना चाहिए जिससे कि मूल्यांकन की एक ऐसी पद्धति सुनिश्चित हो सके जोकि छात्र के विकास का एक वैध और विश्वसनीय माप हो तथा अध्यापन और अधिगम में सुधार के लिए एक सशक्त साधन विकसित किया जाना चाहिए।

सरकारी वित्तपोषणः शिक्षा पर सरकारी वित्तपोषण का हिस्सा धीरे–धीरे घटता जा रहा है और 2005–06 में 3.5 प्रतिशत था। शिक्षा के लिए आबंटित लगभग 100,000 करोड़ रुपए में से प्रारंभिक शिक्षा का हिस्सा 40,000 करोड़ रुपए था। 6–14 आयु वर्ग के प्रत्येक बच्चे को 8 वर्ष की सर्वसुलभ प्रारंभिक शिक्षा प्रदान करने के लिए यह राशि कम है। साथ ही यह राशि अनेक विकासशील देशों में जीडीपी के अनुपात के रूप में शिक्षा पर किए गए खर्च की तुलना में भी कम है। वर्ष 2005–06 के लिए स्कूली शिक्षा, प्रारंभिक और माध्यमिक शिक्षा पर भारत का कुल खर्च 78,661 करोड़ रुपए था जोकि जीडीपी का मात्र 2.46 प्रतिशत बैठता है। दसवीं योजना में प्रारंभिक शिक्षा और साक्षरता के लिए 30,000 करोड़ रुपए का परिव्यय रखा गया था। वास्तविक व्यय 48,201 करोड़ रुपए हुआ है जिसमें से एसएसए का (28,077 करोड़ रुपए) तथा एमडीएम का (13,827 करोड़ रुपए) है जोकि 88 प्रतिशत बैठता है। नीचे दिया गया ग्राफ वर्ष 1992–93 से लेकर 2005–06 के दौरान 1993–94 के स्थिर मूल्यों पर शिक्षा पर किया गया कुल सरकारी खर्च दर्शाता है। 1990 के दशक के उत्तरार्द्ध तक शिक्षा के लिए प्रतिशत आबंटन जीडीपी का लगभग 3.5 प्रतिशत था जोकि दशक के अंत में बढ़ाकर 4 प्रतिशत तक कर दिया गया लेकिन जिसे पुनः घटाकर जीडीपी के 3.75 प्रतिशत तक कर दिया गया है।

व्यावसायिक शिक्षा और प्रशिक्षण

प्रस्तावना

यदि हम भारत को एक ज्ञान–आधारित अर्थव्यवस्था में बदलना चाहते हैं तो एक कुशल जनशक्ति की जरूरत होगी और इस कारण व्यावसायिक शिक्षा और प्रशिक्षण (वीईटी) प्रणाली पर नए सिरे से बल दिया जाना होगा। इसके अलावा देश की जनसंख्या के मौजूदा और प्रत्याशित जनसांख्यिकीय गठन (देखें चित्र) की दृष्टि से यह जरूरी है कि रोजगार–योग्यता तथा कौशलों के मुद्दे की ओर तत्काल ध्यान दिया जाए। सन 2000 में भारत की आबादी की एक–तिहाई आबादी 15 वर्ष से कम आयु की थी और लगभग 20 प्रतिशत आबादी 15–24 वर्ष के आयु वर्ग में थी। यदि इस जनसांख्यिकीय लाभ का कौशल विकास के माध्यम से इष्टतम फायदा नहीं उठाया जाता तो हमें उच्च कुशल ''औपचारिक रूप से प्रशिक्षित'' कार्मिकों के लिए बढ़ती हुई बेरोजगारी और श्रम बाजार में निम्न स्तर के कुशल तथा व्यावसायिक रूप से प्रशिक्षित लोगों की कमी का जोखिम भुगतना होगा।

मौजूदा परिदृश्य

भारत में कौशल अभिग्रहण दो बुनियादी संरचित धाराओं के माध्यम से प्राप्त किया जाता है––एक लघु औपचारिक धारा और दूसरी विशाल अनौपचारिक धारा। कुछेक प्रमुख औपचारिक स्रोतों की सूची तालिका–6 में दी गई है।

चित्र 9: भारत की आबादी का जनसांख्यिकीय गठन

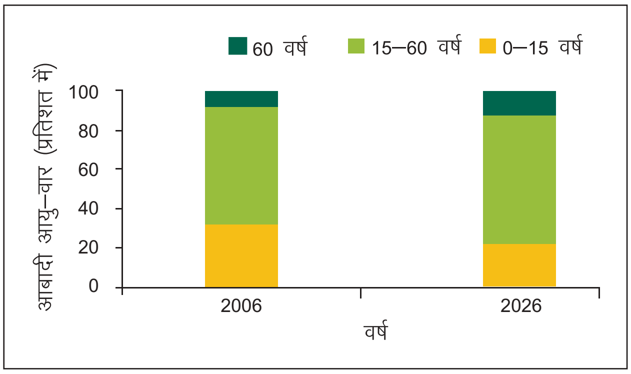

स्रोतः राष्ट्रीय जनसंख्या आयोग द्वारा जनसंख्या अनुमान पर गठित तकनीकी दल की रिपोर्ट, मई 2006 पर आधारित

प्राप्त/प्राप्त हो रहे व्यावसायिक प्रशिक्षण की स्थितिः एनएसएस के 61वें चक्र के तहत 15–29 वर्ष के आयु वर्ग के व्यक्तियों में से केवल 2 प्रतिशत ने यह बताया कि उन्होंने औपचारिक व्यावसायिक प्रशिक्षण प्राप्त किया है तथा अन्य 8 प्रतिशत ने गैर–औपचारिक प्रशिक्षण प्राप्त किए जाने की सूचना दी।

प्राप्त औपचारिक व्यावसायिक प्रशिक्षण के लिए आयु–विशिष्ट दरः जिन व्यक्तियों ने औपचारिक व्यावसायिक प्रशिक्षण प्राप्त किया है उनके अनुपात में व्यक्तियों के आयु के अनुसार वृद्धि होती है। वस्तुतः ग्रामीण क्षेत्रों में इस आशय का अनुपात जोकि 15–19 वर्ष के आयु वर्ग के मामले में 0.6 प्रतिशत था वह 20–24 वर्ष के आयु वर्ग में बढ़कर 1.8 प्रतिशत तथा 25–29 वर्ष के आयु वर्ग में और आगे बढ़कर 1.9 प्रतिशत हो गया।

तालिका 6: भारत में व्यावसायिक शिक्षा और प्रशिक्षण

स्रोत की कोटि	संस्थान	क्षमता	मात्रा
मुख्यधारा की शिक्षा प्रणाली	मानव संसाधन विकास मंत्रालय द्वारा संचालित माध्यमिक शिक्षा के व्यवसायीकरण की केन्द्रीय प्रायोजित स्कीम	उच्च माध्यमिक स्तर पर 3 प्रतिशत से कम छात्रों का नामांकन	9583 स्कूल दो वर्ष की अवधि के लगभग 150 शैक्षिक पाठ्यक्रमों की पेशकश कर रहे हैं
स्कूल तथा विश्वविद्यालय प्रणालियों से बाहर प्रशिक्षण संस्थान	भारतीय प्रशिक्षण संस्थान (आईटीआई) तथा औद्योगिक प्रशिक्षण केन्द्र (आईटीसी)	कुल सीटों की क्षमता 7.85 लाख है	5488 सरकारी (आईटीआई) तथा निजी (आईटीसी) संस्थान वीईटी प्रदान कर रहे हैं जिनमें से 1922 आईटीआई हैं और 3566 आईटीसी हैं
डिप्लोमा स्तर	पालीटेक्निक	एमएचआरडी द्वारा 2.95 लाख की क्षमता से युक्त 1244 पालीटेक्निक चलाए जा रहे हैं	एआईसीटी द्वारा 294,370 सीटों सहित 1747 अनुमोदित डिप्लोमा कार्यक्रम

औपचारिक व्यावसायिक प्रशिक्षण तथा व्यापक क्रियाकलाप स्थितिः जिन व्यक्तियों ने (15–29 वर्ष) औपचारिक व्यावसायिक प्रशिक्षण प्राप्त किया उनका अनुपात बेरोजगारों में सबसे अधिक था। रोजगार में लगे हुए लोगों के मामले में इस आशय का अनुपात लगभग 3 प्रतिशत, बेरोजगारों के मामले में 11 प्रतिशत तथा जो व्यक्ति श्रम शक्ति में शामिल नहीं हैं उनके मामले में 2 प्रतिशत था।

मौजूदा तंत्र में मुद्दे

1. सहभागिताः शैक्षिक सुधारों विषयक कोठारी आयोग, 1966 ने यह परिकल्पना की थी कि माध्यमिक स्तर पर 25 प्रतिशत छात्र व्यावसायिक प्रशिक्षण के लिए जाएंगे। आज की स्थिति में 16 से 18 वर्ष के आयु वर्ग के मात्र लगभग 5 प्रतिशत बच्चे व्यावसायिक धारा में जाते हैं। यह भी इस तथ्य के बावजूद है कि शहरी क्षेत्रों में पुरुषों में से लगभग 19.6 प्रतिशत तथा महिला कामगारों में से 11.2 प्रतिशत के पास विपणनीय कौशल मौजूद थे जबकि ग्रामीण क्षेत्रों में पुरुषों में से 10 प्रतिशत के पास तथा महिला कामगारों में 6.3 प्रतिशत के पास इस तरह के कौशल थे। विकसित, यहां तक कि विकासशील देशों के मामले में यह अनुपात और भी बढ़ा हुआ है।

2. क्षमता प्रयोगः व्यावसायिक शिक्षा में बहुत कम क्षमता है और उसका भी अल्प प्रयोग हो पाता है। केवल 6800 स्कूलों को अनुदान प्राप्त हुआ है और कुल नामांकन मात्र लगभग 5 प्रतिशत सूचित किया गया है। सर्वाधिक नवीनतम जानकारी यह सुझाती है कि कक्षा 11–12 में पढ़ रहे छात्रों में से 3 प्रतिशत से कम छात्रों ने दाखिला लिया है। अनुदान प्राप्त करने वाले स्कूलों का भारित औसत क्षमता प्रयोग लगभग 42 प्रतिशत है। इसका अर्थ यह है कि 350,000 से 400,000 छात्र व्यावसायिक शिक्षा में दाखिला लेते हैं जोकि कक्षा 11 और 12 में पढ़ने वाले 14 मिलियन छात्रों का 3 प्रतिशत से कम बैठता है जिसका अर्थ यह है कि पिछले दशक अथवा उसके आसपास कक्षा 1 में दाखिला लेने वाले छात्रों में से अंततः व्यावसायिक शिक्षा में भाग लेने वालों का अनुपात 1 प्रतिशत से भी कम बैठता है। यह भी व्यापक रूप से स्वीकार किया जाता है कि आईटीआई/आईटीसी में मौजूदा छात्र क्षमता का अधिकांशतः प्रयोग नहीं किया जाता।

चित्र 10: व्यावसायिक शिक्षा और प्रशिक्षण (वीईटी) की स्थिति

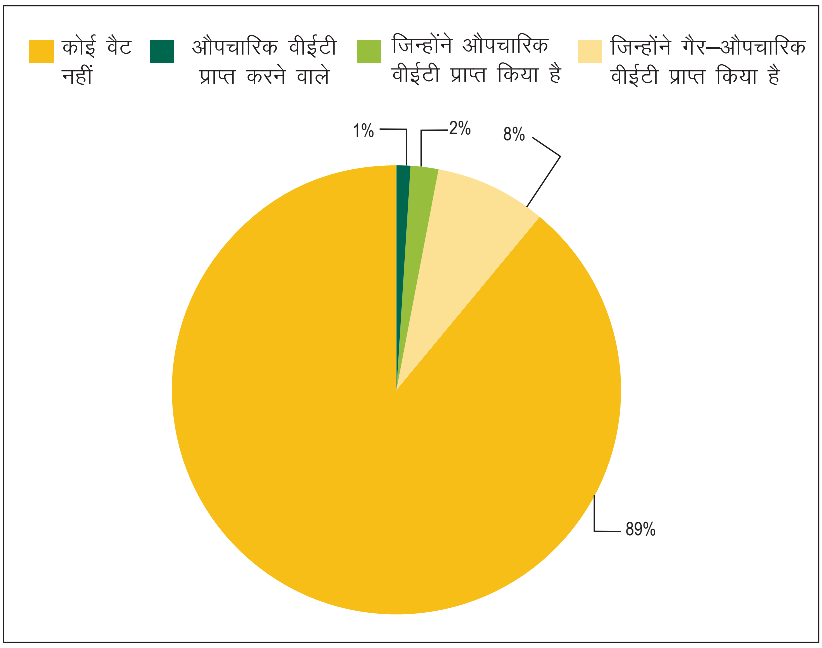

स्रोतः स्टेटस आफ एजूकेशन एंड वोकेशनल ट्रेनिंग इन इंडिया, 2004–05, एनएसएस 61वां चक्र

चित्र 11: व्यावसायिक शिक्षा और प्रशिक्षण के शहरी और ग्रामीण ब्यौरे

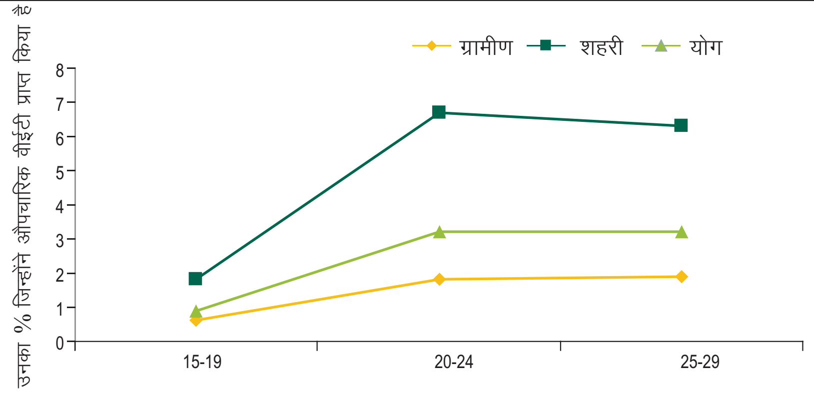

स्रोतः स्टेटस आफ एजूकेशन एंड वोकेशनल ट्रेनिंग इन इंडिया 2004–05, एनएसएस 61वां चक्र

चित्र 12: व्यावसायिक शिक्षा प्राप्त कर रहे व्यक्तियों का क्रियाकलाप स्तर

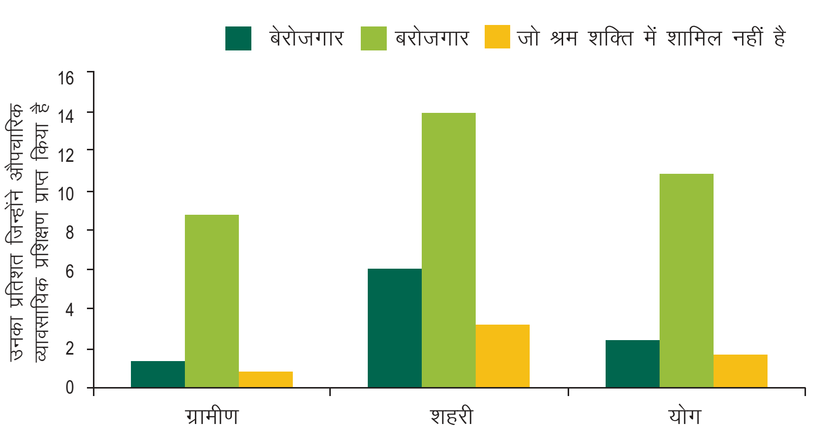

स्रोतः स्टेटस आफ एजूकेशन एंड वोकेशनल ट्रेनिंग इन इंडिया 2004–05, एनएसएस 61वां चक्र

तालिका 7: व्यावसायिक–माध्यमिक शिक्षा के आकार संबंधी अंतर्राष्ट्रीय तुलनाएं

देश	माध्यमिक नामांकन अनुपात	छात्रों की संख्या (हजारों में)	व्यावसायिक–तकनीकी हिस्सा (कुल माध्यमिक नामांकनों का प्रतिशत)
रूस	88	6277	60
चीन	52	15300	55
चिली	70	652	40
इंडोनेशिया	43	4109	33
कोरिया	93	2060	31
मैक्सिको	58	–	12
मलेशिया	59	533	11
दक्षिण अफ्रीका	77	–	1

स्रोत: विश्व बैंक, 2006

तालिका 8: तकनीशियन, ट्रेड और स्नातक प्रशिक्षुओं के संबंध में सीटों का अखिल भारतीय प्रयोग

	आबंटित सीटें	प्रयोग में लाई गई सीटें	प्रतिशत प्रयोग
तकनीशियन प्रशिक्षु	39004	22837	59 प्रतिशत
व्यवसाय प्रशिक्षु	182046	127741	70 प्रतिशत
स्नातक प्रशिक्षु	20420	6084	22 प्रतिशत

स्रोत: वार्षिक रिपोर्ट 2002–03, श्रम मंत्रालय, भारत सरकार

चित्र 13: स्वीकृत क्षमता के संदर्भ में सीटों का प्रयोग

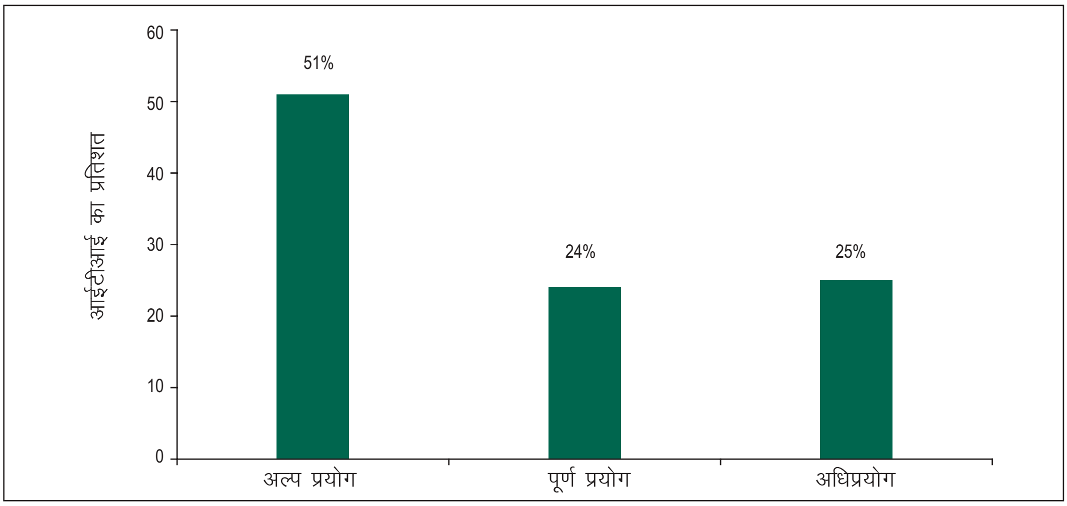

स्रोत: एफआईसीसीआई सर्वेक्षण 2006

3. नमनशीलता: औपचारिक व्यावसायिक प्रशिक्षण में भाग लेने के लिए मौजूदा तंत्र में न्यूनतम अर्हताओं की जरूरत होती है जो कक्षा VIII से लेकर कक्षा XII तक होती है। हालांकि कुछेक व्यवसायों के लिए ये जरूरी हो सकता है लेकिन अन्य के मामले में ये अनावश्यक रूप से बाधक है। साथ ही जब एक बार कोई छात्र व्यावसायिक प्रशिक्षण के लिए मुख्यधारा की शिक्षा को छोड़ देता है तो उसके लिए बाद में मुख्यधारा की शिक्षा में आने का कोई प्रावधान नहीं है। इससे केवल यही नहीं कि इस आशय के सामान्य सोच को बढ़ावा मिलता है कि काम और पढ़ाई परस्पर अलग–अलग विकल्प हैं, बल्कि इससे व्यावसायिक शिक्षा ग्रहण करने का अनुभूत जोखिम भी बढ़ जाता है। साथ ही यह प्रणाली श्रम बाजार की मांग स्थितियों के प्रति संवेदी नहीं है। पाठ्यक्रम/पाठ्यचर्या तंत्र में अनम्यताओं के कारण कुछ व्यवसायों में आवश्यकता से अधिक आपूर्ति हो जाती है जबकि कुछ में कमी रह जाती है। इसके अलावा विशिष्ट कौशलों को प्रदान करने के लिए तैयार किए गए अल्पकालीन प्रशिक्षण पाठ्यक्रमों पर पर्याप्त बल नहीं दिया जाता। भारत में व्यावसायिक शिक्षा और प्रशिक्षण नितांततः लंबी अवधि के (2 से 3 वर्ष) और लगभग 100 कौशलों को कवर करने वाले कुछेक प्रशिक्षण पाठ्यक्रमों पर निर्भर करते है। दूसरी तरफ चीन में लगभग 4000 ऐसे अल्प अवधि के माड्यूलर पाठ्यक्रम हैं जो रोजगार की जरूरतों के प्रति अधिक अनुकूलित कौशल प्रदान करते हैं।

4. प्रभावः प्रशिक्षित अभ्यर्थियों में से स्थानन/अवशोषण दरों से यथापरिलक्षित श्रम बाजार उपलब्धियां बहुत ही न्यून बताई गई है। हालांकि आईटीआई/आईटीसी स्नातकों की श्रम बाजार सफलता के देशव्यापी आंकड़े प्राप्त करने कठिन हैं, एक आईएलओ अध्ययन यह बताता है कि उड़ीसा, आंध्र प्रदेश तथा महाराष्ट्र राज्यों में आईटीआई पूरी कर लेने पर मजदूरी रोजगार/स्वरोजगार में पाए गए स्नातकों का प्रतिशत क्रमशः 16.2 प्रतिशत, 41 प्रतिशत तथा 35 प्रतिशत था। आईटीसी पूरी करने वालों के मामले में तदनुरूपी प्रतिशत क्रमशः 21.3 प्रतिशत, 22.8 प्रतिशत तथा 35.6 प्रतिशत था।

5. उद्योग के साथ संबंधः यद्यपि पाठ्यचर्या तैयार करने तथा प्रशिक्षुओं की सेवाएं प्राप्त करने में उद्योग के प्रतिनिधियों/विशेषज्ञों के सहयोजन का प्रावधान है फिर भी उद्योग की कौशल जरूरतों तथा आईटीआई/आईटीसी से उभरनेवाले प्रतिभा कोष के बीच जबरदस्त बेमेल की स्थिति बनी हुई है। श्रम बाजार में वेट स्नातकों की न्यून सफलता में योगदान देने वाला यह एक प्रमुख तत्व है। निजी क्षेत्र निश्चय ही आंतरिक प्रशिक्षण कार्यक्रम आयोजित करता है और उसने एक बहुत थोड़ी सीमा तक 'बाहरी व्यक्तियों' को प्रशिक्षित भी किया है। तथापि, ऐसे कार्यक्रम कैप्टिव कौशल विकास की प्रकृति के होते हैं और उनकी अपनी अनुभूत जरूरतों को पूरा करने के लिए आयोजित किए जाते हैं। प्रशिक्षणार्थियों को भुगतान करने की न्यून क्षमता और उद्योग की ओर से प्रतियोगिता में पिछड़ जाने के डर से ऐसे प्रशिक्षणार्थियों को प्रशिक्षित करने में आनाकानी के फलस्वरूप इस क्षेत्र में निजी निवेश की चिरकालीन कमी बनी हुई है।

6. गुणवत्ता और प्रत्यायनः प्रदान किए जा रहे प्रशिक्षण का स्तर भी चिंता का एक विषय है क्योंकि टूल किट, संकाय तथा पाठ्यचर्या अपेक्षित स्तर के नहीं हैं। मौजूदा संस्थानों में वित्तीय तथा प्रशासनिक स्वायत्तता का भी अभाव है। ऐसा बताया गया है कि परीक्षण, प्रमाणन और प्रत्यायन की प्रणाली कमजोर है और क्योंकि सुपुर्दगीयोग्य तत्व एकदम सही रूप में परिभाषित नहीं किए जाते इसलिए उपलब्धियों का मूल्यांकन करने तथा स्थाननों का पता लगाने के कोई प्रयास नहीं किए जाते। पाठ्यक्रम पाठ्यचर्या तथा अन्य तत्वों की बाबत उद्योग–संकाय में वैचारिक आदान–प्रदान की कमी के कारण समस्या और भी अधिक जटिल बन जाती है। व्यावसायिक प्रशिक्षण की प्रणाली को लेकर वेट प्रदान करने वाले संस्थानों के स्तर के सतत मानीटरन की कमी विशेष रूप से उल्लेख्य है। हालांकि राज्य सरकारों द्वारा निरीक्षण की एक प्रणाली मौजूद है, यह इस कारण नाकाफी है कि यह किराया–मांगने वाली परिपाटियों को बढ़ावा देती है और अपने वर्णित लक्ष्य की पूर्ति नहीं करती। वेट क्षेत्र में स्वायत्तशासी प्रत्यायन की प्रणाली मौजूद नहीं है।

चित्र 14: आईटीआई/आईटीसी स्नातकों की रोजगार स्थिति

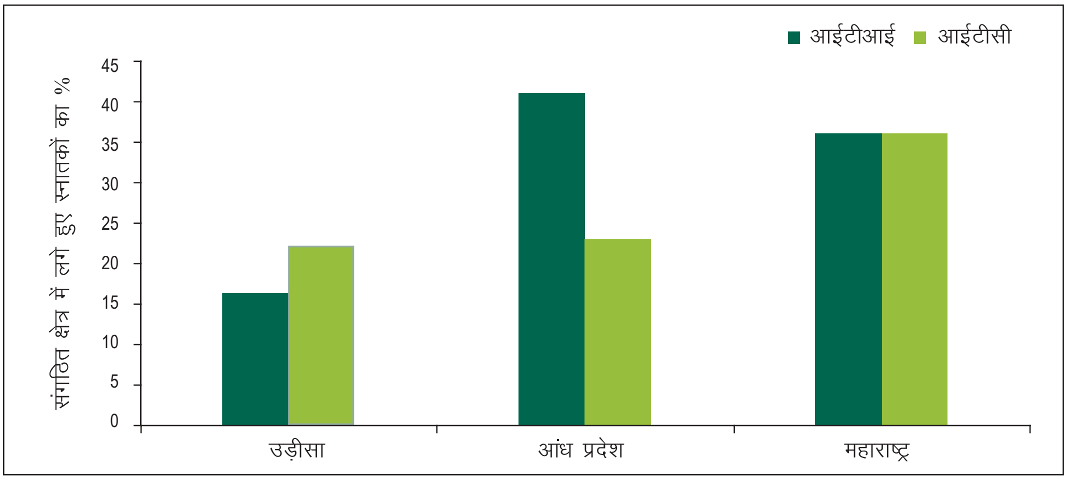

स्रोतः इंडिस्ट्रियल ट्रेनिंग इंस्टीट्यूट्स आफ इंडियाः दि एफिशिएंसी स्टडी रिपोर्ट, आईएलओ 2003

तालिका 9: 3 राज्यों में आईटीआई तथा आईटीसी की आंतरिक प्रभाविता

संकेतक	उड़ीसा		आंध्र प्रदेश		महाराष्ट्र	
	आईटीआई	आईटीसी	आईटीआई	आईटीसी	आईटीआई	आईटीसी
छात्रों को बनाए रखना	80.9	94.9	68.3	84.8	85.6	89
स्नातक दर	88.3	95.6	62.9	62.7	77.5	79.4
क्षमता उपयोग	102.1	101	77.4	83.3	92.2	91
छात्र/अध्यापक अनुपात	9.3	5.4	5.5	9.6	–	–
समग्र आंतरिक प्रभाविता	73.8	90.9	31.8	45.7	67.6	61.1

स्रोतः इंडिस्ट्रियल ट्रेनिंग इंस्टीट्यूट्स आफ इंडियाः दि एफिशिएंसी स्टडी रिपोर्ट, आईएलओ 2003

उच्चतर शिक्षा

प्रस्तावना

देश की युवा आबादी के बीच एक जनसांख्यिकीय विस्फोट होने का अर्थ यह है कि उच्चतर शिक्षा को संगत आबादी की वृद्धि के साथ बना रहना होगा। 2001 की जनगणना के अनुसार देश की 31.2 प्रतिशत आबादी अथवा 337 मिलियन लोग 15 वर्ष से कम आयु के थे। इस समूह को उच्चतर शिक्षा प्रदान करना जरूरी है तथा इस अनूठी जनसांख्यिकीय प्रवृत्ति की चुनौतियों का मुकाबला करने के लिए ऐसी शिक्षा अभूतपूर्व पैमाने पर उपलब्ध करानी होगी। संप्रति, उच्चतर शिक्षा को गुणवत्ता और उत्कृष्टता और साथ ही समावेशन सहित सुलभता में सुधार लाने की प्रमुख चुनौतियों का सामना करना पड़ रहा है। संगत आयु में हमारी आबादी का जो अनुपात उच्चतर शिक्षा की दुनिया में प्रवेश करता है, वह मात्र 10 प्रतिशत (2004–05) है। विश्वविद्यालयों में उपलब्ध सीटों की संख्या के अर्थों में उच्चतर शिक्षा की सुलभता मौजूदा मांग की दृष्टि से कम है। साथ ही राज्यों के बीच शहरी और ग्रामीण, लैंगिक, जाति और गरीब–गैर–गरीब की दृष्टि से नामांकन दरों में व्यापक विषमताएं हैं।

मौजूदा परिदृश्य

संस्थान: 2006 की स्थिति के अनुसार भारतीय उच्चतर शिक्षा प्रणाली में 355 विश्वविद्यालय तथा 18,064 कालेज हैं––20 केन्द्रीय विश्वविद्यालय, 216 राज्य विश्वविद्यालय, 101 सम–विश्वविद्यालय, राज्य कानून के माध्यम से स्थापित 5 संस्थान तथा राष्ट्रीय महत्व के 13 संस्थान।

नामांकन: 2005–06 में भारतीय उच्चतर शिक्षा प्रणाली में दाखिल छात्रों की संख्या अनुमानतः 110 लाख थी। भारत में उच्चतर शिक्षा में छात्रों के नामांकन में वृद्धि असमान और धीमी रही है। उदाहरण के लिए जहां नामांकन में 2006–07 के दौरान 6.7 प्रतिशत की दर से वृद्धि हुई वहां 2005–06 में 5.2 प्रतिशत की दर से वृद्धि हुई।

अध्यापक: उच्चतर शिक्षा प्रणाली में अध्यापकों की कुल संख्या 4.88 लाख है। कुल शिक्षण समुदाय में से 84 प्रतिशत संबंधनप्राप्त कालेजों में तथा 16 प्रतिशत विश्वविद्यालयों तथा कालेजों में नियुक्त थे। विश्वविद्यालय विभागों तथा कालेजों में छात्र–अध्यापक अनुपात 18 है जबकि संबंधनप्राप्त कालेजों में 23 बैठता है।

मौजूदा तंत्र में मुद्दे

विस्तार: उच्चतर शिक्षा में मौजूदा नामांकन लगभग 11 मिलियन है। जबकि पिछले कुछ वर्षों में उच्चतर शिक्षा में नामांकन में वृद्धि अनुकूल रही है लेकिन विदेशों के साथ तुलना करने पर वह काफी नहीं है। संप्रति, उच्चतर शिक्षा

चित्र 15: उच्चतर शिक्षा प्रणाली की उन्नति

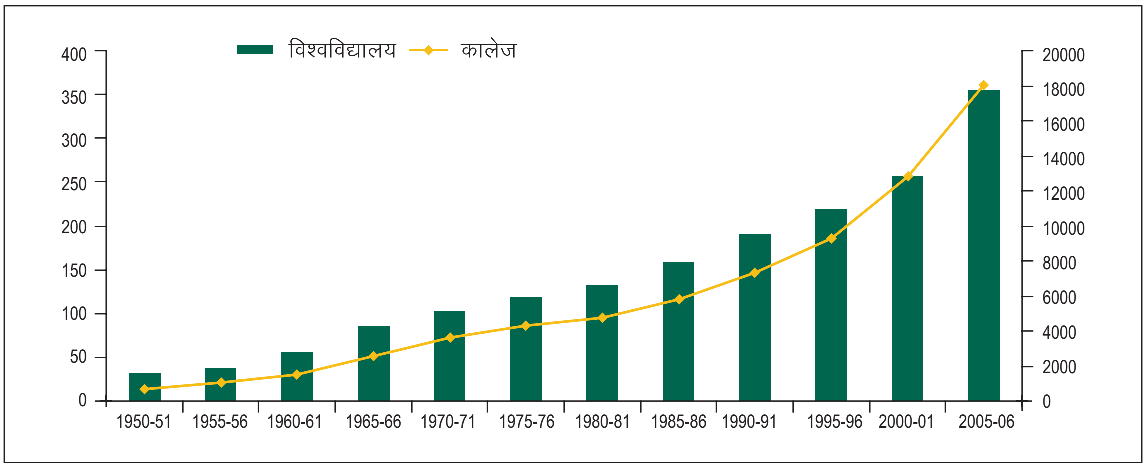

स्रोतः यूजीसी

चित्र 16: भारत में उच्चतर शिक्षा में छात्र नामांकन में वृद्धि (1950–51 से 2005–06)

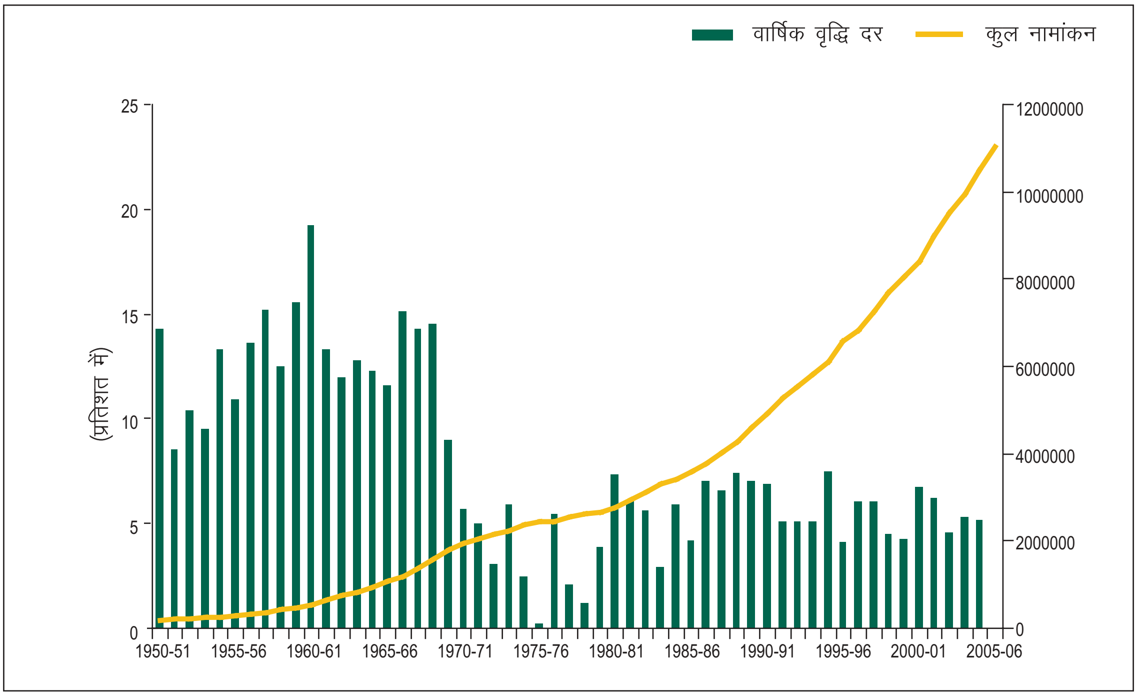

स्रोतः यूजीसी

तालिका 10: उच्चतर शिक्षा में अध्यापकों की संख्या 2005–06

संस्थान	नामांकन (हजार में)	अध्यापक (हजार में)	छात्र–अध्यापक अनुपात
विश्वविद्यालय विभाग तथा विश्वविद्यालय कालेज	1427	79	18
संबंधनप्राप्त कालेज	9601	409	23
योग	11028	488	22

स्रोतः यूजीसी वार्षिक रिपोर्ट 2005–06

में सकल नामांकन अनुपात (जीईआर) लगभग 10 प्रतिशत है जबकि कई अन्य विकासशील देशों के मामले में इस आशय का अनुपात 25 प्रतिशत है। यहां तक कि दक्षिण–पूर्व एशियाई देश कहीं उच्चतर नामांकन का परिचय देते हैं: फिलीपींस (31 प्रतिशत), थाइलैंड (19 प्रतिशत), मलेशिया (27 प्रतिशत) तथा चीन (13 प्रतिशत)। यूएसए के मामले में नामांकन दर 81 प्रतिशत, यूके में 54 प्रतिशत तथा जापान में 49 प्रतिशत है। जिन विभिन्न समितियों ने भारत में उच्चतर शिक्षा परिदृश्य का अध्ययन किया है, उन्होंने यह सिफारिश की है कि जीईआर को बढ़ाकर कम से कम 20 प्रतिशत तक लाया जाना चाहिए। उदाहरण के लिए उच्चतर शिक्षा के वित्तपोषण संबंधी कैब समिति ने अंतर्राष्ट्रीय अनुभव के आधार पर यह निष्कर्ष निकाला कि आर्थिक निष्पादन में बदलाव के लिए 20 प्रतिशत या इससे उच्चतर नामांकन दर अनुरूप है। यदि भारत को इस लक्ष्य की पूर्ति जल्दी करनी है तो इसका अर्थ यह होगा कि अगले 5 से 7 वर्षों के भीतर उच्चतर शिक्षा का पैमाना और आकार दुगुने से अधिक बनाना होगा।

तालिका 11: सकल नामांकन अनुपात (जीईआर) 18–24 वर्ष (प्रतिशत में)

वर्ष	उच्चतर शिक्षा
2001–02	8.07
2002–03	8.97
2003–04	9.21
2004–05	9.97

स्रोतः एमएचआरडी

सुलभताः उच्च विषमताओं के चलते, समावेशी शिक्षा एक दुर्ग्राह्य लक्ष्य रहा है। नामांकन में अंतर्जातीय, पुरुष–महिला तथा क्षेत्रीय विषमताएं अभी भी प्रमुख बनी हुई हैं। उदाहरण के लिए जहां शहरी क्षेत्रों में रहने वाले लोगों के मामले में सकल नामांकन अनुपात करीबन 20 प्रतिशत था, ग्रामीण क्षेत्रों के मामले में इस आशय का अनुपात मात्र 6 प्रतिशत था। इसके अलावा अनुसूचित जनजातियों (एसटी), अनुसूचित जातियों (एससी) तथा अन्य पिछड़े वर्गों (ओबीसी) का सकल

नामांकन अनुपात क्रमशः 6.57, 6.52 तथा 8.77 था जोकि 11 के अखिल भारत औसत की तुलना में बहुत कम है।

विनियमनः मौजूदा उच्चतर शिक्षा प्रणाली में विनियामक तंत्र जटिल है। संप्रति, केवल कानून के माध्यम से प्रवेश एक विकट बाधक तत्व है। विश्वविद्यालय की स्थापना के लिए संसद की विधायिका का एक अधिनियम होना चाहिए। नए संस्थानों के मामले में सम–विश्वविद्यालय का दर्जा प्राप्त करना और भी अधिक दुष्कर है। परिणामतः जहां मौजूदा विश्वविद्यालयों के औसत आकार में क्रमिक वृद्धि हो रही है वहां उनकी गुणवत्ता में क्रमिक गिरावट आ रही है। प्रतियोगिता न होने के कारण समस्याएं और बढ़ जाती हैं। कालेजों की बहुत बड़ी संख्या ऐसी हैं जिसे यूजीसी द्वारा यूजीसी अधिनियम के खंड 2(च) के अधीन मान्यता प्रदान नहीं की जाती। इस प्रकार यूजीसी के सामने उच्चतर शिक्षा में अध्यापन और शिक्षा के मानक बनाए रखने को लेकर बड़ी चुनौती बनी रहती है। इसके अलावा अवर–स्नातक कालेजों के लिए संबंधनप्राप्त कालेजों की प्रणाली पर्याप्त नहीं है। इन कालेजों को विशाल भारी–भरकम विश्वविद्यालयों के साथ संबंधन प्रदान कर दिया जाता है, जिससे कि प्रदान की जा रही शिक्षा के स्तर का मानीटरन करना कठिन बन जाता है। संप्रति, अवर–स्नतक स्तर पर लगभग 90 प्रतिशत तथा स्नातकोत्तर स्तरपर 67 प्रतिशत नामांकन संबंधनप्राप्त कालेजों में है। ऐसे संस्थानों की संख्या काफी बड़ी है जो तकनीकी दृष्टि से यूजीसी के अधीन हैं लेकिन उन्हें इस कारण कोई वित्तीय सहायता प्रदान नहीं की जाती कि वे न्यूनतम पात्रता मानदंडों की पूर्ति नहीं करते।

संकायः आज की स्थिति में भारत में उच्चतर शिक्षा को प्रभावित करने वाली एक प्रमुख समस्या उत्तम संकाय की कमी है। समुचित अर्हताप्राप्त लोगों की अनुपलब्धता के कारण अक्सर अध्यापकों की कमी बनी रहती है। इसके अलावा लोकप्रियता की दृष्टि से शैक्षणिक व्यवसाय में क्रमिक गिरावट आई है––जिसका कारण संभवतः यह है कि इस व्यवसाय में प्रोत्साहनों की कमी है जबकि दूसरे व्यवसायों में लाभकारी अवसर बने हुए हैं। अध्यापकों की बढ़ती हुई प्रतिपूर्ति के अलावा निष्पादन–आधारित प्रोत्साहन लागू किए जाने की भी जरूरत है ताकि उच्चस्तरीय अध्यापन सुनिश्चित हो सके।

वित्तपोषणः शिक्षा पर सरकारी व्यय (केन्द्र और राज्य) जीडीपी का लगभग 3.6 प्रतिशत है। उच्च शिक्षा का सरकारी वित्तपोषण अभी भी जीडीपी के 1 प्रतिशत से कम है। जीडीपी के संदर्भ में विश्वविद्यालय तथा उच्चतर शिक्षा पर प्रतिशत व्यय जोकि 1990–91 में 0.77 प्रतिशत तथा 2004–05 में वह क्रमिक रूप से गिरकर 0.66 प्रतिशत रह गया। अनेक समितियों ने सर्वसम्मति से यह सिफारिश की है कि राज्य वित्तपोषण बढ़ाकर 6 प्रतिशत कर दिया जाए। जबकि केन्द्रीय शिक्षा सलाहकार बोर्ड (कैब) ने उच्चतर शिक्षा के लिए 1 प्रतिशत तथा तकनीकी शिक्षा के लिए 0.5 प्रतिशत खर्च किए जाने की सिफारिश की है, 2004–05 में उच्च शिक्षा के लिए इस आशय का अनुपात 0.34 प्रतिशत तथा तकनीकी शिक्षा के लिए 0.03 प्रतिशत था।

भारत में उच्चतर शिक्षा पर प्रति छात्र सरकारी व्यय न्यूनतम अर्थात 406 अमरीकी डालर रहा है जोकि मलेशिया (11,790 डालर), चीन (2728 डालर), ब्राजील (3986 डालर), इंडोनेशिया (666 डालर) तथा फिलीपींस (625 डालर) की तुलना में कम बैठता है। सांकेतिक अर्थों में उच्चतर शिक्षा में 2003–04 में प्रति छात्र व्यय 12518 रुपए था। प्रवृत्ति विश्लेषण यह दर्शाता

चित्र 17: उच्चतर शिक्षा में नामांकन में विषमताएं (2004–05)

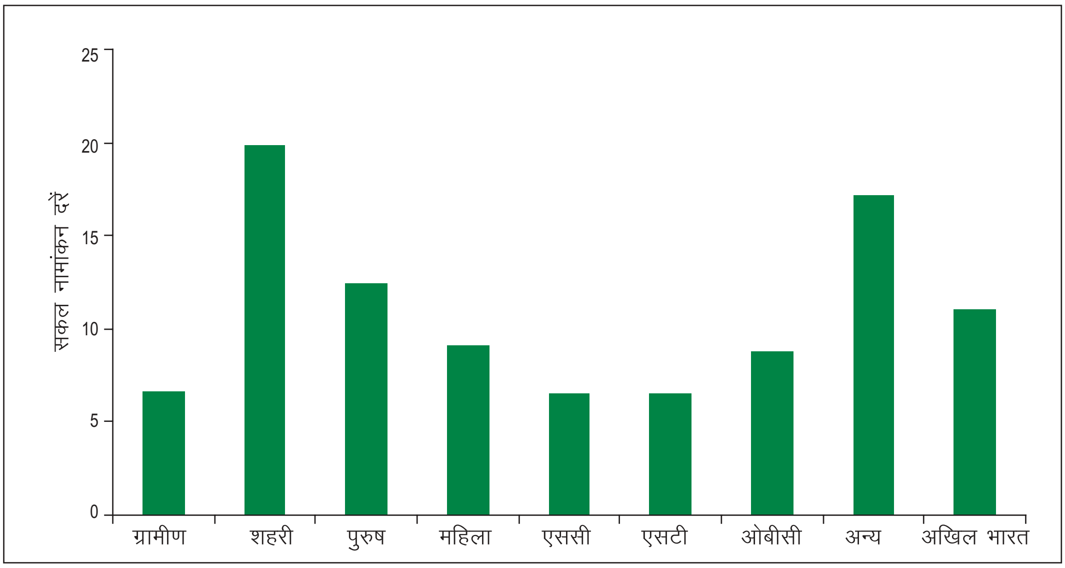

स्रोतः यूजीसी

चित्र 18: राज्य और केन्द्र का (राजस्व लेखा) के शिक्षा विभागों के लिए क्षेत्र–वार योजनागत तथा योजनेतर बजटीय व्यय

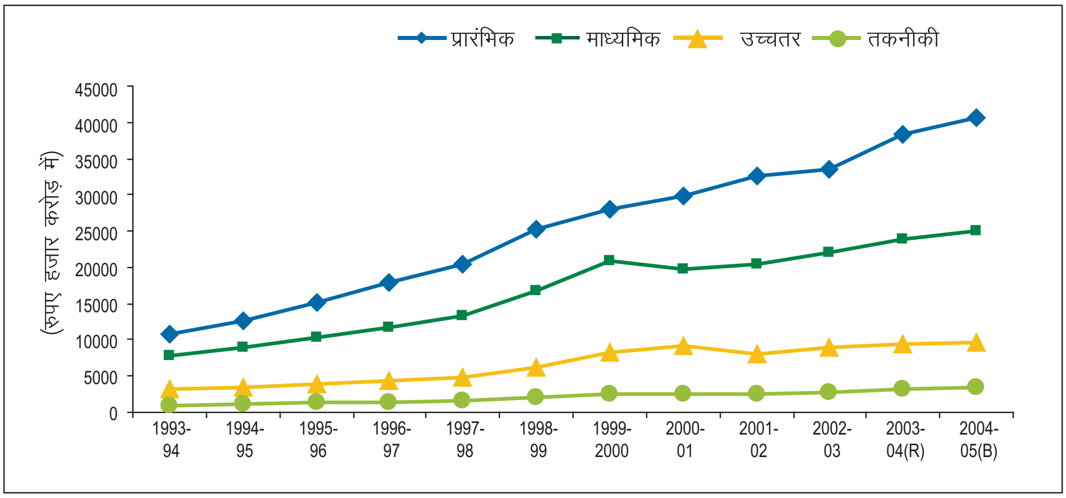

स्रोतः एमएचआरडी

चित्र 19: उच्चतर शिक्षा में प्रत्येक छात्र पर सरकारी व्यय–सांकेतिक और वास्तविक

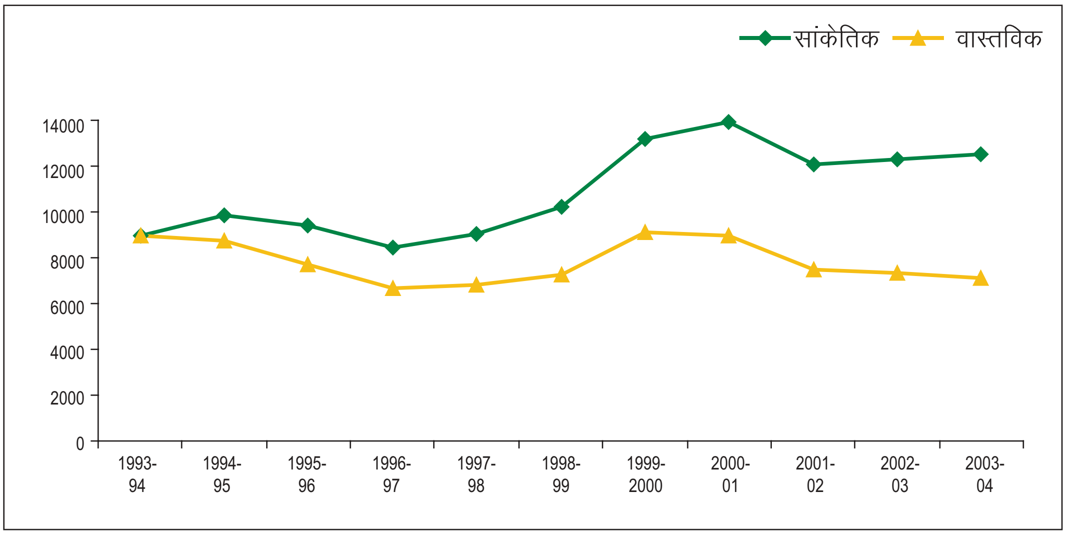

स्रोतः शिक्षा पर बजटीय व्यय का विश्लेषण, एमएचआरडी, भारत सरकार

है कि यदि हम नामांकन में वृद्धि पर विचार करें तो इन अर्थों में वृद्धि कोई खास नहीं है कि उच्चतर शिक्षा में प्रति छात्र पर सरकारी व्यय जो 1993–94 में 8961 रुपए था वह 2003–04 में घटकर 7117 रुपए रह गया।

निजी संस्थानः निजी गैर–सहायताप्राप्त उच्चतर शिक्षा संस्थानों का हिस्सा जोकि 2001 में 42.6 प्रतिशत था, वह 2006 में बढ़कर 63.21 प्रतिशत तक पहुंच गया। इसी अवधि के दौरान नामांकन का उनका हिस्सा भी 32.89 प्रतिशत से बढ़कर 51.53 प्रतिशत हो गया। इस प्रवृत्ति के जारी रहने की संभावना है और इसलिए ऐसी आशा करना उचित है कि उच्चतर शिक्षा के लिए लक्षित संवर्धी नामांकन में से लगभग आधा नामांकन निजी प्रदाताओं की ओर से आएगा। राज्य को निजी क्षेत्र की भूमिका स्वीकार करने और उसकी सहभागिता को बढ़ावा देने की जरूरत है। व्यावसायिक क्षेत्र का पहले ही वस्तुतः निजीकरण हो चुका है, 80 प्रतिशत से अधिक इंजीनियरी कालेज निजी क्षेत्र द्वारा वित्तपोषित और प्रबंधित किए जा रहे हैं। हालांकि निजी क्षेत्र के प्रवेश के लिए कड़ी बाधाएं हैं, निजी क्षेत्र के उत्पादकों और उपलब्धियों पर पर्याप्त नियंत्रण नहीं है।

प्रत्यायनः उच्चतर शिक्षा में प्रत्यायन का आशय संस्थान की गुणवत्ता का निर्धारण करने से है। जिन मानदंडों पर संस्थानों का विशिष्टतः आकलन किया जाता है वे हैंः छात्रों की अपेक्षित उपलब्धि, पाठ्यचर्या, संकाय का स्तर, छात्रों के लिए शैक्षणिक सहयोग और सेवाएं तथा वित्तीय क्षमता। भारत में प्रत्यायन (अमरीका और यूके देशों से हटकर) सरकारी एजेंसियों द्वारा किया जाता है। उच्चतर शिक्षा के संस्थानों का प्रत्यायन करने के लिए यूजीसी द्वारा 1994 में राष्ट्रीय मूल्यांकन और प्रत्यायन बोर्ड

(एनएएसी) का गठन किया गया था। एनएएसी का मूल्यांकन पूर्व–निर्धारित मानदंडों पर आधारित होता है जिसमें स्व–अध्ययन और समकक्ष समीक्षा शामिल होती है। एनएएसी सात मानदंडों के आधार पर जिनमें से प्रत्येक मानदंड के लिए अलग–अलग भारिता दी जाती है, विभिन्न प्रकार के संस्थानों के लिए प्रत्यायन और प्रमाणन करता है। एनएएसी ने अभी तक 355 में से 140 विश्वविद्यालयों का तथा 18,064 कालेजों में से 3,492 कालेजों का प्रत्यायन किया है। इस प्रकार सभी संस्थानों में से केवल 10 प्रतिशत संस्थान कवर किए गए हैं जबकि निजी कालेजों तथा विश्वविद्यालयों में से तो कोई भी कवर नहीं किया गया है। प्रत्यायन की प्रक्रिया गुणवत्ता संबंधी गंभीर समस्याओं का परिचय देती है। केवल 9 प्रतिशत कालेजों और 31 प्रतिशत विश्वविद्यालयों को 'ए' ग्रेड दिया गया है बाकी को 'बी' और 'सी' श्रेणियों में रखा गया है। एनएसी द्वारा प्रत्यायन स्वैच्छिक होता है जोकि पांच वर्षों के लिए वैध होता है। तथापि बहुत कम संस्थानों ने नैक द्वारा प्रत्यायन के लिए अनुरोध किया है।

गुणवत्ता: भारत में आजकल प्रदान की जा रही उच्चतर शिक्षा की गुणवत्ता को लेकर समस्याएं बनी हुई है। पश्चिम के संस्थानों में प्रति वर्ष 1,50,000 से अधिक छात्र जाते हैं और इस प्रकार प्रति वर्ष लगभग 2–3 बिलियन डालर विदेशी मुद्रा की निकासी होती है। इस प्रकार पश्चिम के शिक्षा संस्थानों के लिए भारत वैश्विक दृष्टि से दूसरा सबसे अधिक विशाल लक्षित बाजार बन जाता है। हालांकि विश्वस्तरीय मानकों की पूर्ति की समस्या आबादी की बड़ी जरूरतों की पूर्ति करने जितनी दबावपूर्ण नहीं है, फिर भी इस संबंध में भारत की स्थिति सामान्यतः निम्न स्तरों की परिचायक है। सर्वोच्च 200 विश्वविद्यालयों के क्रम–निर्धारण से संबंधित लंदन टाइम्स हायर एजूकेशन सप्लीमेंट में केवल एक भारतीय संस्थान को सूचीबद्ध किया गया था जबकि विश्वस्तरीय विश्वविद्यालयों के शंघाई विश्वविद्यालय के क्रम–निर्धारण में केवल 3 भारतीय विश्वविद्यालय शामिल किए गए थे।

चित्र 20: टाइम्स शीर्षस्थ 100 विश्वविद्यालयों में विश्वविद्यालयों की देश–वार संख्या

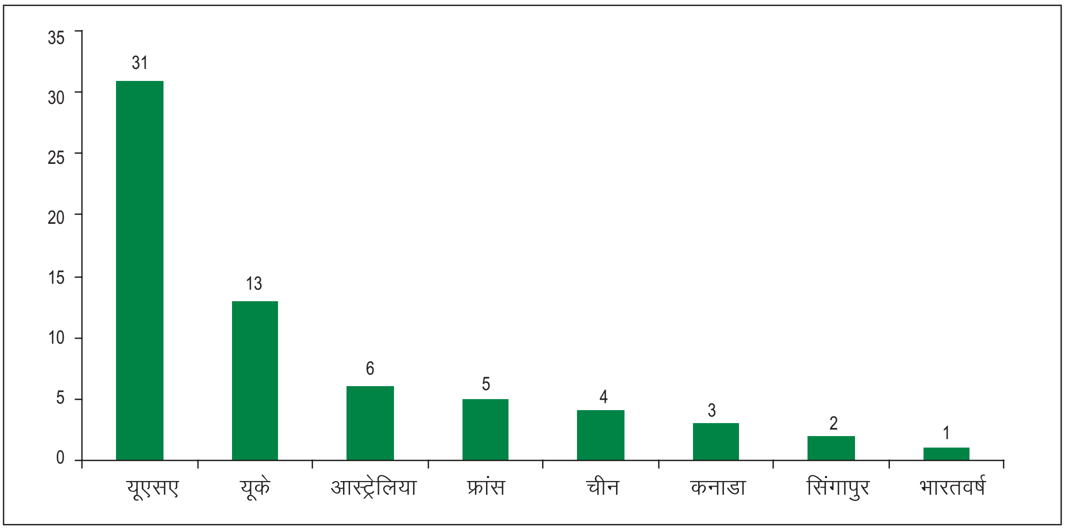

स्रोतः टाइम्स टायर एजूकेशन सप्लीमेंट, लंदन

तालिका 12: भारत में उच्चतर शिक्षा के कालेजों की मौजूदा गुणवत्तात्मक स्थिति

विवरण	संख्या
कालेजों की कुल संख्या	17,625
यूजीसी के अधिकारक्षेत्र में कालेजों की संख्या	14,000
यूजीसी अधिनियम के खंड 2(1) के अधीन मान्यताप्राप्त कालेजों की संख्या	5,589 (40 प्रतिशत)
यूजीसी अधिनियम के खंड 12(बी) के अधीन मान्यताप्राप्त कालेजों की संख्या	5,273 (38 प्रतिशत)
यूजीसी द्वारा वस्तुतः वित्तपोषित कालेजों की संख्या	4,870 (35 प्रतिशत)
एनएएसी द्वारा प्रत्यायित कालेजों की संख्या	2,780 (20 प्रतिशत)
एनएएसी द्वारा प्रत्यायित तथा 60 प्रतिशत से अधिक अंक प्राप्त करने वाले कालेजों की संख्या	2,506 (17.9)

स्रोतः एमएचआरडी

गणित और विज्ञान में और अधिक प्रतिभाशाली छात्र

प्रस्तावना

जहां भारत अपने आपको एक ज्ञानवान उच्च शक्ति के रूप में स्थापित करने का प्रयास करता है वहां उसके लिए अपने विज्ञान और प्रौद्योगिकी आधार का निर्माण करना जरूरी है। इस संबंध में शुद्ध विज्ञानों की एक महत्वपूर्ण भूमिका है—विज्ञान में एक मजबूत नींव, प्रौद्योगिकी में उत्कृष्टता निर्मित करने, आर्थिक उन्नति और खुशहाली को आगे बढ़ाने और फलतः जीवनस्तरों में सुधार लाने में मदद करती है। यद्यपि भारत के पास अमूर्त चिंतन तथा आविष्कारों की एक समृद्ध विरासत है, लेकिन हाल में इस क्षेत्र में प्रगति में गिरावट आई है। यह अधिकाधिक रूप से महसूस किया जा रहा है कि कला, वाणिज्य और व्यावसायिक पाठ्यक्रमों की लोकप्रियता तथा संबद्ध व्यवसायों में और अधिक आकर्षक अवसरों के चलते शुद्ध गणित और विज्ञान पढ़ने वाले छात्रों की संख्या में गिरावट आई है। देश में वैज्ञानिक व्यावसायिकों का एक महत्वपूर्ण आधार निर्मित करने के लिए यह जरूरी है कि गणित और विज्ञान के प्रति और अधिक उत्तम छात्रों को आकृष्ट करने की दिशा में तात्कालिक उपाय किए जाएं।

मौजूदा परिदृश्य

स्कूल स्तरः यद्यपि मिडिल स्तर पर (कक्षा 6–8) विज्ञान सबसे अधिक पसंदीदा विषय के रूप में छाया हुआ है, उच्च माध्यमिक स्तर (कक्षा 11–12) पर यह कम लोकप्रिय विषय बन जाता है। एनसीईआर द्वारा किए गए एक विज्ञान सर्वेक्षण में कक्षा 6–8 के 22 प्रतिशत छात्रों ने कहा कि भविष्य में थे शुद्ध विज्ञान पढ़ना चाहेंगे। फिर भी कक्षा 11 और 12 स्तर पर सर्वेक्षित छात्रों में से केवल 13.4 प्रतिशत छात्रों ने स्नातक/स्नातकोत्तर स्तर पर शुद्ध विज्ञान पढ़ने की इच्छा व्यक्त की। यह अनुपात इंजीनियरी, चिकित्सा, कलाओं तथा वाणिज्य जैसे अन्य विषयक्षेत्रों की तुलना में कम है।

इसके अलावा माध्यमिक स्तर के पश्चात विज्ञान में जाने वाले छात्रों की संख्या का अनुपात जो 1950 के दशक के पूर्वार्द्ध में 32 प्रतिशत था वह हाल के वर्षों में घटकर 19.7 प्रतिशत रह गया। और भी अधिक महत्वपूर्ण बात यह है कि जहां 1950 के दशक में सर्वाधिक प्रतिभाशाली छात्र विज्ञान का चयन करते थे, विज्ञान के मौजूदा छात्र इसका चयन अंतिम विकल्प के रूप में करते हैं। इससे यह पता चलता है कि युवा छात्र, विशेष रूप से प्रतिभाशाली छात्र विज्ञान से अलग हटते जा रहे हैं। उदाहरण के लिए जैसाकि होमी भाभा सेंटर फार साइंस एजूकेशन (एचबीसीएसई) द्वारा सूचित किया गया है भौतिकशास्त्र, रसायनशास्त्र अथवा जीवविज्ञान में ओलिम्पयाड के लिए चुने गए बहुत थोड़े से छात्रों ने उच्चतर शिक्षा के लिए मूल विज्ञानों का चयन किया। हाल के वर्षों में राष्ट्रीय प्रतिभा खोज अवार्ड प्राप्त करने वालों की रुचि भी यही प्रवृत्ति परिलक्षित करती है। अवार्ड प्राप्त

चित्र 21: छात्रों के स्तर के अनुसार उच्चतर शिक्षा के लिए पसंदीदा विषय (2004)

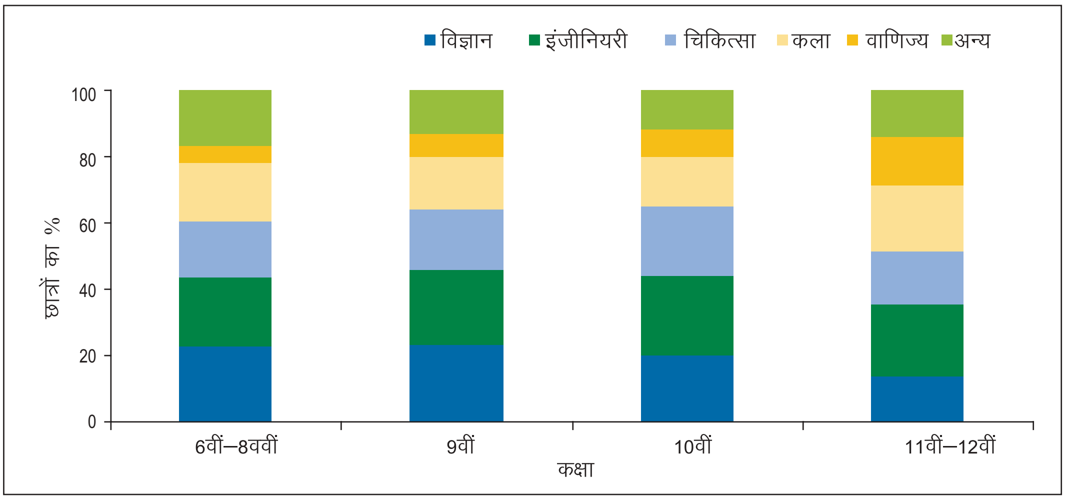

स्रोतः इंडिया साइंस रिपोर्ट, नेशनल काउंसिल आफ एप्लाइड इकोनामिक रिसर्च

करने वाले 750 छात्रों में से केवल लगभग 100 ने विज्ञान का चयन किया और केवल 15–20 प्रतिशत अवार्ड प्राप्तकर्ताओं ने स्नातकोत्तर स्तर पर विज्ञान का चयन किया।

उच्च माध्यमिक स्तर पर छात्र विज्ञान क्यों चुनते हैं अथवा विज्ञान न चुनने का निर्णय क्यों लेते हैं, इस आशय के कारणों के और आगे विश्लेषण से यह पता चलता है कि विज्ञान के लिए उमंग मूल कारण है। इसमें कोई आश्चर्य की बात नहीं कि उच्च माध्यमिक स्तर पर विज्ञान का चयन करने का दूसरा प्रमुख कारण 'बेहतर रोजगार अवसर' होता है। हमजोलियों का दबाव, बदलती हुई समाजार्थिक स्थिति और बाजार तंत्रों के फलस्वरूप छात्र मूल विज्ञानों से हटकर व्यावसायिक पाठ्यक्रमों का चयन करते हैं जो छात्रों के समूह को उच्चतर वेतनों के प्रति आकृष्ट करते हैं। (देखिए तालिका 13 और 14)

तालिका: 13 विज्ञान में दाखिला लेने के कारण

कारण	विज्ञान छात्रों का प्रतिशत (कक्षा 11 और 12)
विज्ञान विषय में रुचि	66.6
बेहतर रोजगार अवसर	20.4
माता–पिता की इच्छा	3.3
विज्ञान में अनुसंधान में रुचि	1.8
वैज्ञानिकों के कार्यों से प्रभावित	1.3
विज्ञान अध्यापकों का स्तर बहुत अच्छा है	0.8
हमजोलियों के समूह का दबाव	0.7
विदेश जाने की इच्छा	0.2
अन्य	4.8

स्रोत: इंडिया साइंस रिपोर्ट, नेशनल काउंसिल आफ एप्लाइड इकोनामिक रिसर्च

तालिका 14: विज्ञान में दाखिला न लेने के कारण

कारण	गैर–विज्ञान छात्रों का प्रतिशत (कक्षा 11 और 12)
विज्ञान विषयों में रुचि नहीं	44.5
कठिन विषय	20.4
उच्चतर अध्ययन महंगा है	9.9
वाणिज्य में रुचि	5.4
कला विषय पसंद है	4.8
कोई भावी अवसर नहीं	2.1
निकट में कोई विज्ञान कालेज नहीं	2
प्रतियोगी परीक्षा पास करना कठिन	1.1
स्कूलों में शिक्षण का घटिया स्तर	1.1
अन्य	8..9

स्रोत: इंडिया साइंस रिपोर्ट, नेशनल काउंसिल आफ एप्लाइड इकोनामिक रिसर्च

उच्चतर शिक्षा: 2005–06 में विज्ञान में लगभग 2.25 मिलियन छात्र (यूजीसी) दाखिल हैं, उच्चतर शिक्षा के कुल नामांकन में उनका हिस्सा 19 प्रतिशत बैठता है। वास्तविक अर्थों में यह संख्या छोटी नहीं है। 2004 में भी स्टाक स्थिति अच्छी थी। स्नातक तथा उससे उच्चतर स्तर पर पास होने वाले लगभग एक–चौथाई छात्रों की विज्ञान शिक्षा की पृष्ठभूमि थी। विज्ञान में कुल मिलाकर 8.74 मिलियन स्नातक (कुल स्नातकों का 22.3 प्रतिशत) 1.8 मिलियन स्नातकोत्तर (स्नातकोत्तरों का 19.4 प्रतिशत) तथा 0.1 मिलियन डाक्टरेट (कुल डाक्टरेटों के एक–तिहाई) हैं। तथापि शुद्ध विज्ञानों और गणित में नामांकन में वृद्धि उतनी नहीं हुई है जितनी व्यावसायिक क्षेत्रों में हुई है। यहां तक कि गणित और विज्ञान पढ़ने के लिए विदेश जाने वाले भारतीय छात्रों की संख्या में भी गिरावट आई है।

चित्र 22: उच्चतर शिक्षा में एकल नामांकन

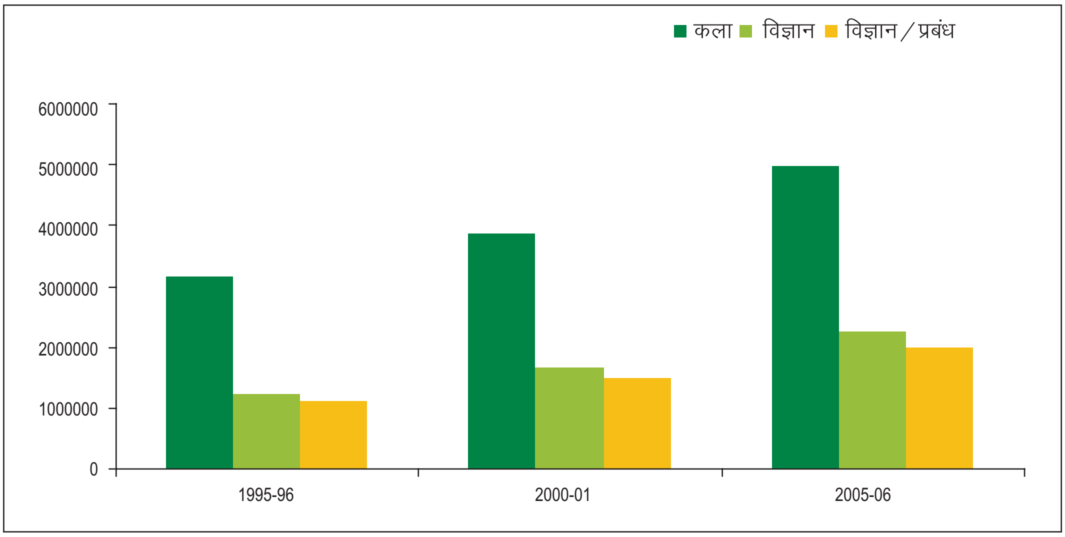

स्रोत: यूजीसी

चित्र 23: विज्ञान में राज्य–वार नामांकन (2000–01)

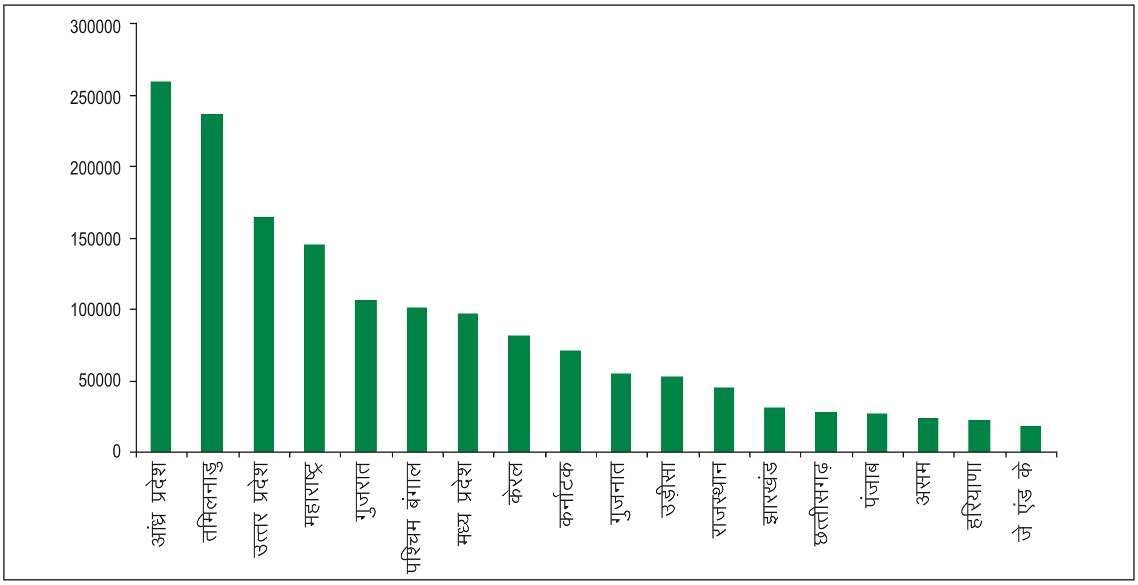

स्रोतः यूनिवर्सिटी डेवलपमेंट इन इंडिया 1994–95 से 2000–01 यूजीसी

चित्र 24: चुनिंदा देशों में सभी डाक्टरल डिग्रियों के प्रतिशत के रूप में विज्ञान और इंजीनियरी डाक्टरल डिग्रियां

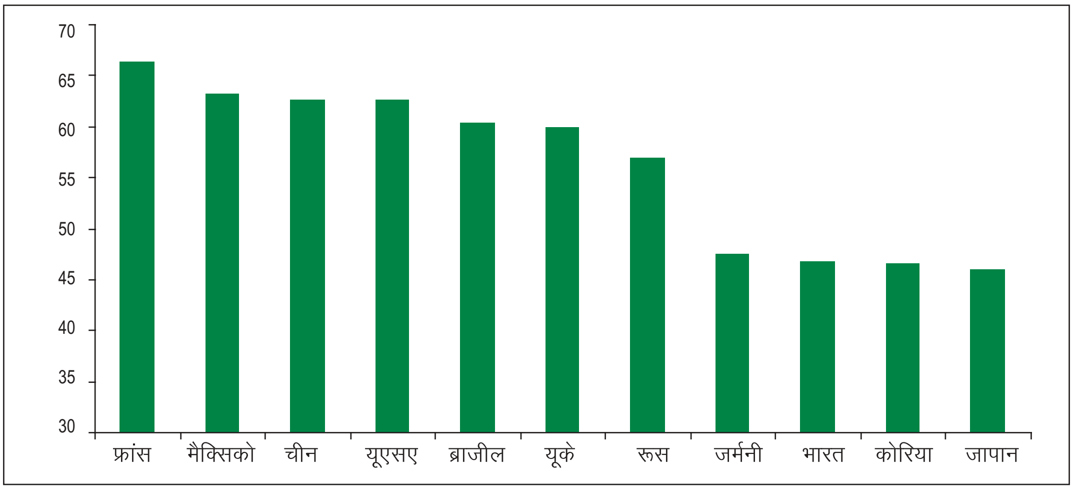

स्रोतः एनएसएफ, विज्ञान और इंजीनियरी संकेतक 2004, परिशिष्ट तालिका 2–36

एमएचआरडी के आंकड़ों के अनुसार विज्ञान की धारा में (1991 तथा 1998 के बीच) विदेश जाने वाले छात्रों की संख्या में 33 प्रतिशत की वास्तविक गिरावट आई है जबकि बैंकिंग, प्रौद्योगिकी, वाणिज्य और प्रबंध में विदेश जाने वाले छात्रों की संख्या में काफी बढ़ोतरी हुई है। यह छात्रों की रुचि ऐसे पाठ्यक्रमों की तरफ बदल जाने का परिणाम हो सकता है जिनमें विज्ञान की तुलना में जीवनवृत्ति के बेहतर विकल्प उपलब्ध हैं।

विज्ञान में नामांकन में उल्लेखनीय क्षेत्रीय असंतुलन की स्थिति बनी हुई है क्योंकि आंध्र प्रदेश और तमिलनाडु में विज्ञान लेने वाले छात्रों की संख्या अन्य राज्यों की तुलना में बहुत विशाल है।

अनुसंधानः जबकि सभी क्षेत्रों में अनुसंधान के लिए ध्यान केन्द्रण की जरूरत रहती है, विज्ञान की स्थिति विशेष रूप से निराशापूर्ण है। विज्ञान स्नातकों की वास्तविक संख्या कम नहीं है लेकिन विज्ञान धारा में डाक्टरेट की संख्या बहुत ही कम है। यूजीसी के 2005–06 के आंकड़ों के अनुसार विज्ञान के डाक्टरेट छात्रों की संख्या विज्ञान में स्नातकों के नामांकन का मात्र 1.1 प्रतिशत बैठती है। जबकि अधिकांश विकसित देशों में कुल डाक्टरल डिग्रियों में विज्ञान और गणित में 60 प्रतिशत से अधिक डाक्टरल डिग्रियां है जबकि भारत में विज्ञान और इंजीनियरी में मात्र 46 प्रतिशत डाक्टरेट हैं (देखें चित्र 24)।

विज्ञान और गणित में घटती रुचि की ओर व्यापक रूप से ध्यान दिए जाने की जरूरत है। शिक्षाशास्त्र, मूल्यांकन, पाठ्यचर्या, जीवनवृत्तियों तथा आधारिक–तंत्र संबंधी मुद्दों को प्रभावी रू प से हल किए जाने की जरूरत है। विज्ञान ने कभी जो उमंग पैदा की थी उसे बड़े पैमाने पर लोकप्रियकरण कार्यक्रमों के आयोजन के जरिए पुनः वापिस लाया जा सकता है।

विधिक शिक्षा

प्रस्तावना

व्यावसायिक शिक्षा के एक पक्ष के रूप में विधिक शिक्षा का समाज में महत्व, विधि की ऐतिहासिक उपयोगिता के अर्थों में ही नहीं बल्कि वैश्वीकरण की मौजूदा अंतर्वस्तु के रूप में भी बहुत अधिक बढ़ गया है। विधिक शिक्षा ज्ञान की अवधारणाओं के सृजन और साथ ही समाज में ऐसी अवधारणाओं के अनुप्रयोग के बीच एक महत्वपूर्ण कड़ी है। पिछले कुछ वर्षों के दौरान शैक्षिक–जगत, सिंचाई, निगमित व्यवसाय, सरकारी तथा सिविल समाज के बीच विधि में प्रशिक्षित कार्मिकों की मांग बहुत अधिक बढ़ गई है और ऐसी आशा है कि आने वाले वर्षों में ऐसे प्रशिक्षित कार्मिकों की मांग और अधिक तेजी से बढ़ेगी। इसलिए भारत में विधिक शिक्षा के संबंध में एक सुस्पष्ट दीर्घकालीन परिकल्पना वर्णित की जानी जरूरी है।

मौजूदा परिदृश्य

संस्थानः 2006 में विधिक शिक्षा प्रदान करने वाले लगभग 750 संस्थान थे जिनमें से 153 सरकारी संस्थान थे और 586 निजी संस्थान थे। कुल मिलाकर 11 राष्ट्रीय विधि स्कूल विश्वविद्यालय (एनएलएसयू) थे।

नामांकनः 2005–06 में 3.36 लाख छात्र विधिक शिक्षा में दाखिल थे और उच्चतर शिक्षा में इसका हिस्सा 3.05 बैठता है। इसके अलावा 2006 में एनएलएसयू में कुल 936 छात्रों ने दाखिला लिया।

चित्र 25: विधि पढ़ाने वाले संस्थानों की संख्या (2006)

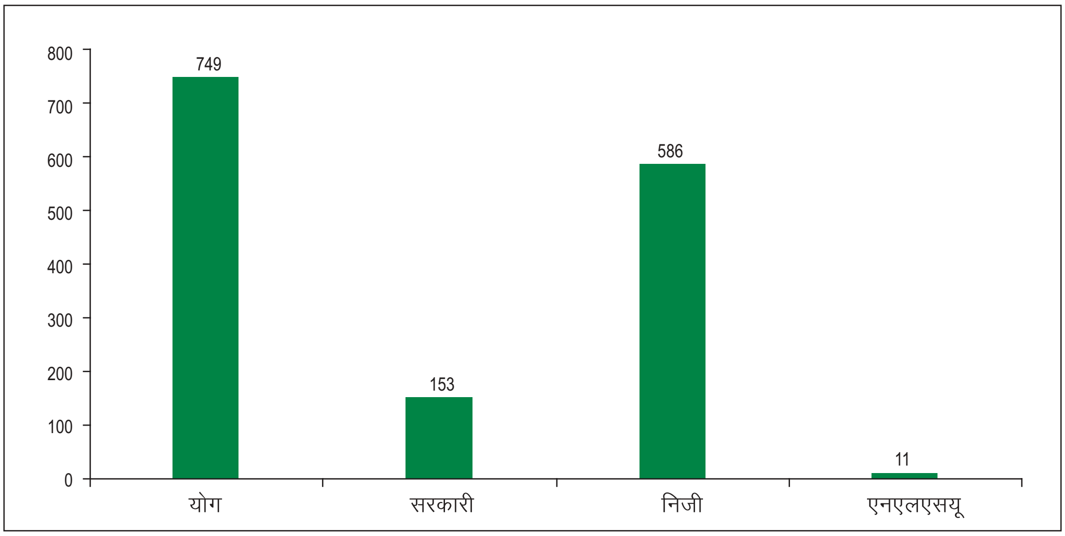

स्रोतः बार काउंसिल आफ इंडिया

चित्र 26: विधि में कुल नामांकन

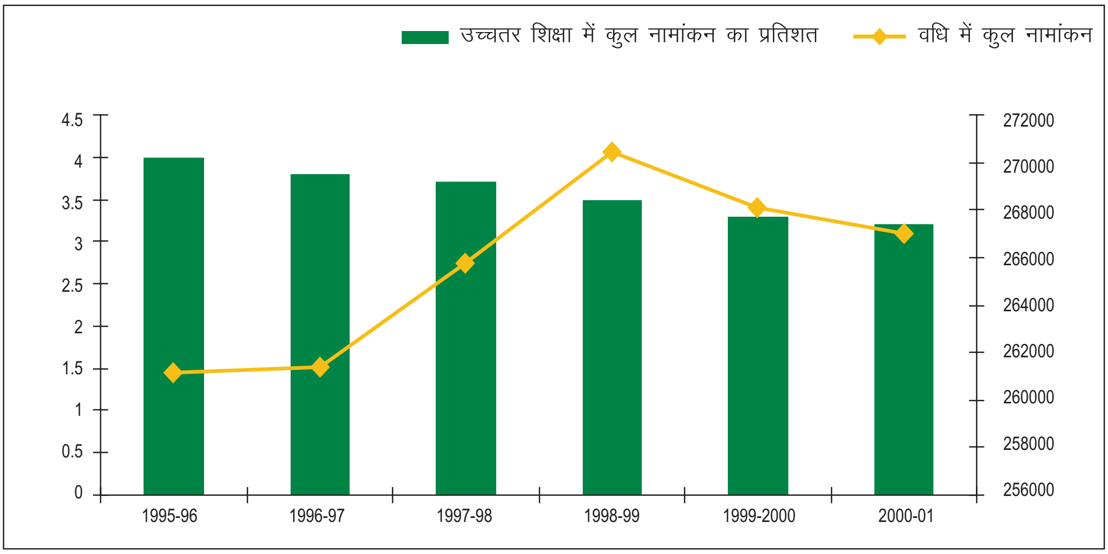

स्रोतः यूनिवर्सिटी डिपार्टमेंट्स इन इंडिया 1995–96 से 2000–01, यूजीसी

चित्र 27: बार में दाखिल विधि स्नातकों की कुल संख्या

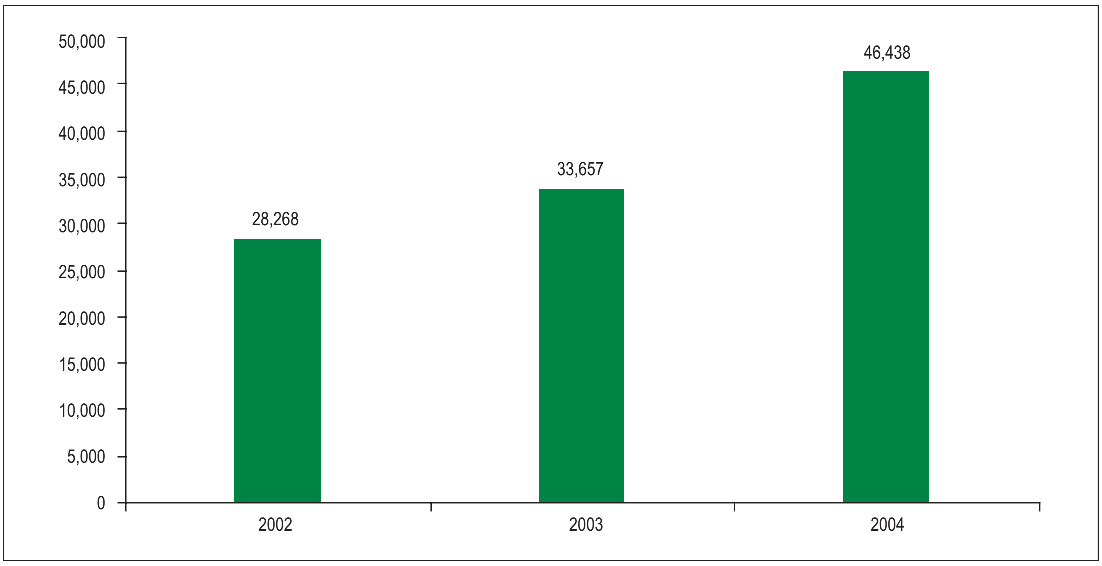

स्रोतः बार काउंसिल आफ इंडिया

चिकित्सा शिक्षा

प्रस्तावना

आबादी को स्वास्थ्य देखभाल का एक न्यूनतम स्तर उपलब्ध कराना विकास प्रक्रिया का एक महत्वपूर्ण घटक है। इसके फलस्वरूप चिकित्सा शिक्षा के लक्ष्यों और उद्देश्यों, इसकी गुणवत्ता और मात्रा का मानवीय विकास, स्वास्थ्य सेवाओं तथा समूचे देश के कल्याण के निमित्त बौद्धिक संपदा के निर्माण की दृष्टि से व्यापक महत्व है। जबकि भारत में चिकित्सा शिक्षा का पिछले 60 वर्षों में विस्तार हुआ है फिर भी देश की जरूरतों को ध्यान में रखते हुए वह नाकाफी बनी रही है। यह स्थिति स्वास्थ्य व्यावसायिकों और स्वास्थ्य सेवाओं की, जिन्हें लेकर ग्रामीण और शहरी क्षेत्रों के बीच और साथ ही विभिन्न राज्यों के बीच व्यापक विषमताएं बनी हुई है की कमी से परिलक्षित होती है। इसलिए गुणवत्ता के मुद्दों को दृष्टिगत रखते हुए भारतीय चिकित्सा शिक्षा प्रणाली का विस्तार किए जाने की तात्कालिक जरूरत है।

मौजूदा परिदृश्य

नामांकन: चिकित्सा शिक्षा में दाखिल छात्रों की संख्या जोकि 1995–96 में 1,88,187 थी, वह 2005–06 में बढ़कर 3,48,485 तक पहुंच गई। तथापि, उच्चतर शिक्षा में कुल नामांकन के एक अनुपात के रूप में चिकित्सा में नामांकन में शायद ही कोई वृद्धि हुई हो–जहां 1995–96 में इसका अनुपात 2.9 प्रतिशत था, वहां 2005–06 में बढ़कर वह 3.1 प्रतिशत तक पहुंच गया।

संस्थान: 2005–06 में चिकित्सा कालेजों (ऐलोपैथी, आयुर्वेद, होम्योपैथी, यूनानी, दंत्य, उपचर्या तथा फार्मेसी) की कुल संख्या 2092 थी।

एलोपैथिक चिकित्सा कालेज: 2006 में देश के भीतर 262 एलोपैथिक चिकित्सीय कालेज थे जिनमें से 174 चिकित्सा कालेज भारत की चिकित्सा परिषद द्वारा आईएमसी अधिनियम के खंड 11(2) के अधीन मान्यताप्राप्त थे। बाकी 88 कालेजों को आईएमसी अधिनियम 1956 के खंड 10ए के अधीन एमबीबीएस पाठ्यक्रम शुरू करने के लिए अनुमति प्रदान की गई है। 262 चिकित्सा कालेजों में से 131 सरकारी चिकित्सा कालेज थे और बाकी 131 निजी चिकित्सा कालेज थे। इन कालेजों की वार्षिक प्रवेश क्षमता लगभग 29,172 है। निजी चिकित्सा कालेजों की संख्या में वृद्धि तेजी से हुई है––जहां 1995 में इनकी संख्या 47 थी, वहां 2006 में यह संख्या बढ़कर 131 तक पहुंच गई। इसी अवधि के दौरान सरकारी चिकित्सा कालेजों की संख्या 109 से बढ़कर 131 तक पहुंच गई।

आयुष चिकित्सा कालेज: आयुर्वेद, योग तथा प्राकृतिक चिकित्सा, यूनानी सिद्ध और होम्योपैथी (आयुष) कालेजों की संख्या में पिछले पांच वर्षों में क्रमिक वृद्धि हुई है (देखें चित्र 31)।

चित्र 28: चिकित्सा शिक्षा में नामांकन में वृद्धि

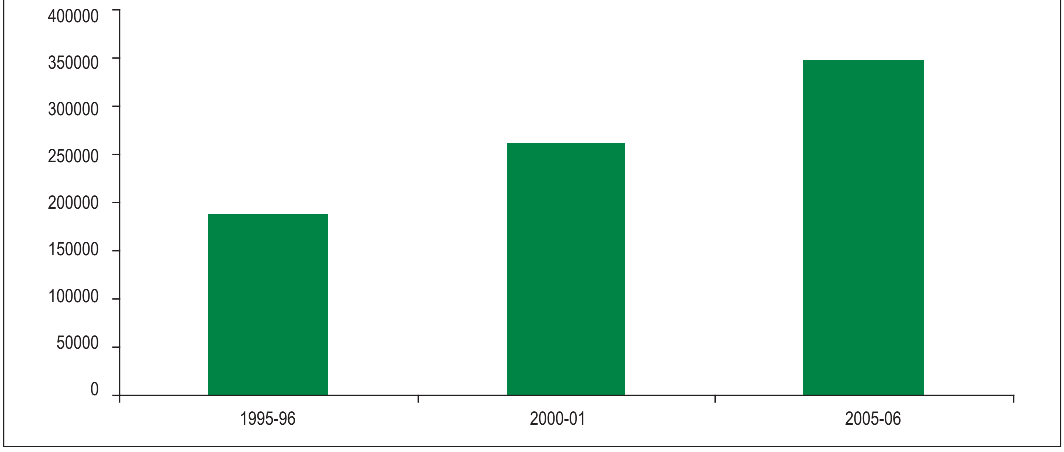

स्रोत: यूजीसी

चित्र 29: चिकित्सा कालेजों में वृद्धि

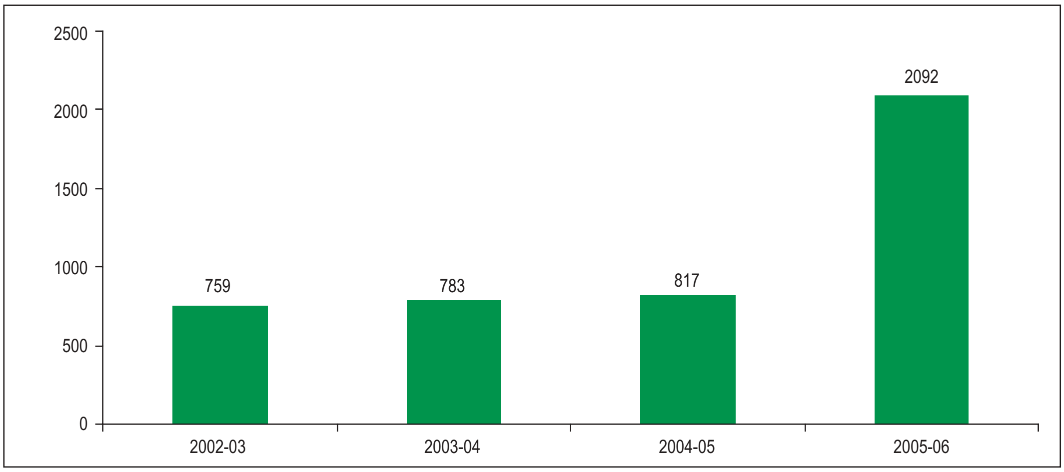

स्रोतः एमएचआरडी सेलेक्टेड स्टैटिस्टिक्स 2005–06

चित्र 30: चिकित्सा कालेजों में वृद्धि–सरकारी और निजी

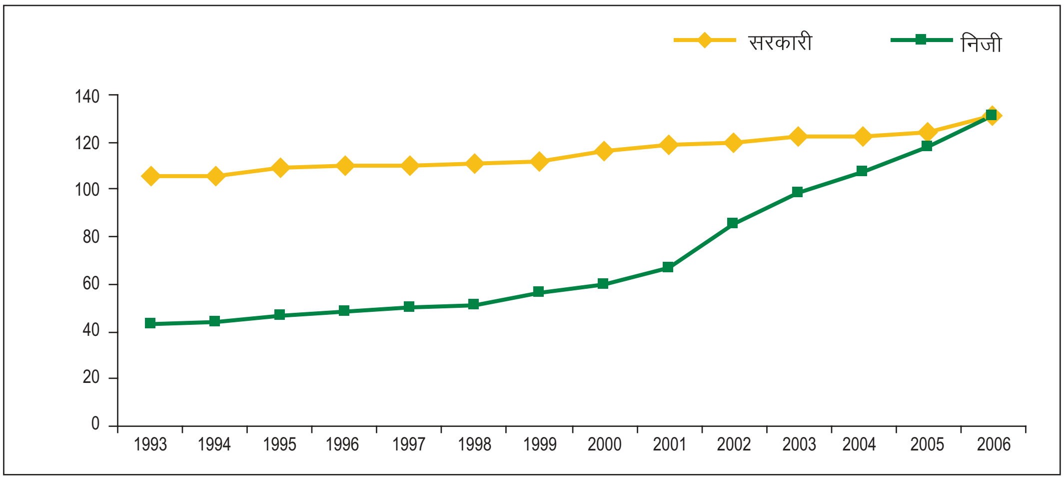

स्रोतः मेडीकल काउंसिल आफ इंडिया

यह एक चिंता का कारण है कि चिकित्सा कालेजों की बहुत बड़ी संख्या छः राज्यों (महाराष्ट्र, कर्नाटक, आंध्र प्रदेश, तमिलनाडु, केरल तथा गुजरात) में केन्द्रित है। ये राज्य चिकित्सा कलोजों की कुल संख्या का 63 प्रतिशत और सीटों की संख्या का 67 प्रतिशत हिस्सा कवर करते हैं। इसके मुकाबले अन्य राज्यों में कालेजों/सीटों की संख्या बहुत ही कम है––कालेजों की कुल संख्या का 20 प्रतिशत तथा एम्पावर्ड एक्शन ग्रुप राज्यों के मामले में 18 प्रतिशत सीट; तथा कालेजों की कुल संख्या में से 3 प्रतिशत और पूर्वोत्तर राज्यों की सीटों में 3 प्रतिशत। ग्रामीण शहरी क्षेत्र का अंतर भी बना हुआ है––जहां शहरी क्षेत्रों में आबादी के मात्र 30 प्रतिशत लोग रहते हैं, वहां शैक्षिक संस्थानों में से 96 प्रतिशत संस्थान मौजूद है, जबकि ग्रामीण क्षेत्रों में जहां 70 प्रतिशत आबादी रहती है, शैक्षिक सुविधाएं बहुत ही कम हैं।

विनियमनः चिकित्सा शिक्षा पर नियंत्रण के लिए अनेक निकाय मौजूद हैं जिनसे जुड़े हुए प्राधिकारियों में ये शामिल हैंः स्वास्थ्य मंत्रालय, भारतीय चिकित्सा परिषद (एमसीआई), यूजीसी, राज्य चिकित्सा शिक्षा विभाग और परिषदें, चिकित्सा कालेज/संस्थान, एमएएमएस तथा एनबीई (राष्ट्रीय परीक्षा बोर्ड)। भारतीय चिकित्सा परिषद (एमसीआई) की स्थापना 1933 में की गई थी और भारतीय चिकित्सा परिषद अधिनियम, 1933 के अनुसार यह एक सांविधिक अनुशंसात्मक निकाय है। एमसीआई संस्थानों को भारत सरकार की पूर्व अनुमति से केवल पाठ्यक्रम शुरू करने और 1956 के एमसीआई अधिनियम के अधीन यथानिर्धारित मानदंडों के अनुसार उसका विस्तार करने के लिए मान्यता प्रदान करता है, इस निकाय के पास कोई विनियामक शक्तियां नहीं है; यह मात्र एक अनुशंसात्मक निकाय है। पिछले कुछ वर्षों में वह अपने प्रयोजन की पूर्ति करने में असफल रहा है और इस कारण चिकित्सा शिक्षा में क्रमिक गिरावट आई है। राज्य चिकित्सा शिक्षा विभाग और परिषदें मूल्यांकन के बिना व्यवसाय करने के लिए लाइसेंस मंजूर करती है। चिकित्सा कालेज अधिकतर एमसीआई का पालन करते हैं तथा छात्रों अथवा पाठ्यक्रमों का स्तरोन्नयन अथवा मूल्यांकन करने का कोई प्रयास नहीं करते।

गुणवत्ताः चिकित्सा शिक्षा में सतत और विनियमित मानकों की

कमी है, नए कालेजों में संदिग्ध प्रशिक्षण क्षमताएं हैं और कोई भी प्रत्यायन तंत्र नहीं है। चिकित्सा स्नातकों का प्रायः राष्ट्रीय तथा अंतर्राष्ट्रीय मानकों के अनुसार नैदानिक कौशलों के लिए कोई मूल्यांकन नहीं किया जाता। विनियमन की कमी है और इस कारण समस्या और जटिल बन जाती है। राज्य सरकारें नैदानिक कौशलों का कोई भी मूल्यांकन किए बिना सामान्य विशेषज्ञता, उप–विशेषज्ञता अथवा सुपर–विशेषज्ञता चिकित्सा करने के लिए लाइसेंस प्रदान कर सकती हैं। प्रति वर्ष लगभग 26000 स्नातक एमबीबीएस पाठ्यक्रम पूरा कर लेते हैं तथा 11–12 हजार स्नातकोत्तर सीटें होने के कारण लगभग 14–15 हजार स्नातक सैद्धांतिक ज्ञान के सहारे, किंतु ज्ञान के किसी भी अनुप्रयोग के बिना चिकित्सा व्यवसाय में प्रवेश करते हैं। एमसीआई के पास मानकों का सतत मूल्यांकन करने के लिए न तो शक्तियां हैं न आधारिक–तंत्र। भारत में मौजूदा चिकित्सा शिक्षा को अंतर्राष्ट्रीय मानकों तक स्तरोन्नत करने के लिए प्रत्येक स्तर पर व्यापक सुधार किए जाने की जरूरत है।

पाठ्यचर्या: स्नातक पाठ्यक्रम 4–1/2 वर्ष का होता है जिसमें आंतरिक और बाह्य परीक्षकों द्वारा मूल्यांकन पहले वर्ष में तथा दूसरे वर्ष में और 2–1/2 वर्ष बाद किया जाता है ताकि अर्जित सैद्धांतिक ज्ञान का आकलन किया जा सके। कौशल मूल्यांकन एक मामले की चर्चा तक सीमित होता है। स्थानबद्ध प्रशिक्षण एक वर्ष की अवधि का होता है जिसका न तो कोई संकाय पर्यवेक्षण किया जाता न कोई मूल्यांकन तंत्र होता है। चिकित्सा स्कूल छोड़ने के बाद तथा सामान्य प्रैक्टिस शुरू करने से पहले स्नातक अपर्यवेक्षित नैदानिक कौशल प्राप्त करता है। केवल लगभग पांच हजार को एक स्नातकोत्तर सीट मिल सकती हैं और उसके बाद वह ग्रेडेड नैदानिक जिम्मेदारी से होकर गुजरता है। अतः इस बात को लेकर कोई आश्चर्य नहीं होना चाहिए कि एम्स तथा 16 चिकित्सा कालेजों के संघ द्वारा 1989–96 किए गए एक अध्ययन का यह निष्कर्ष था कि हमारे चिकित्सा कालेजों में नैदानिक कौशलों की कमी है। इन अध्ययनों की अनुवर्ती कार्रवाई के रूप में डब्ल्यूएचओ, एसईएआरओ ने *जनरल*

चित्र 31: भारत में आयूष कालेजों की वृद्धि

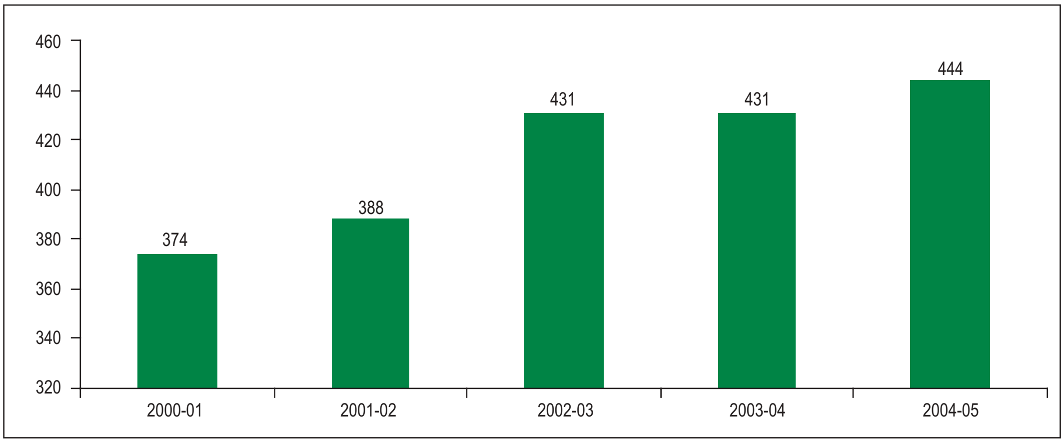

स्रोतः भारतीय चिकित्सा परिषद

चित्र 32: चिकित्सा कालेजों का राज्य–वार वितरण (2005)

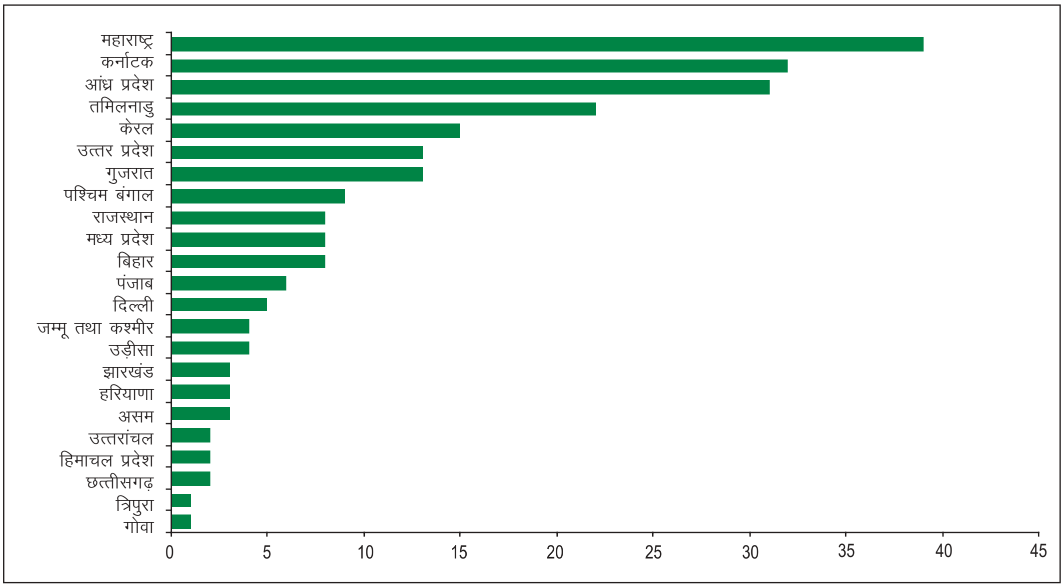

स्रोतः भारतीय चिकित्सा परिषद

प्रैक्टिस इन इंडिया, नेपाल एंड श्रीलंका–ए स्टेटस रिपोर्ट (1998) नामक एक अध्ययन किया जिसने यह पाया कि नमूने के सामान्य व्यावसायिकों द्वारा प्रदान की जा रही चिकित्सीय देखभाल संदिग्ध स्तर की थी।

वित्तपोषण: स्वास्थ्य के लिए, जिसमें चिकित्सा शिक्षा शामिल है केन्द्रीय बजट आबंटन जोकि 1999 में जीडीपी का 1.3 प्रतिशत था, वह आज की स्थिति में घटकर 0.9 प्रतिशत रह गया है। कुल केन्द्रीय बजट के एक प्रतिशत हिस्से के रूप में यह 1.3 प्रतिशत पर स्थिर बना रहा है जबकि राज्यों में यह 7 प्रतिशत से घटकर 5.5 प्रतिशत रहा गया है (राष्ट्रीय स्वास्थ्य नीति 2002)। वर्ष 2001–02 के राष्ट्रीय स्वास्थ्य लेखे (एनएचए) के परिणाम यह दर्शाते हैं कि देश में स्वास्थ्य संबंधी कुल व्यय 1,05,734 करोड़ रुपए का हुआ जोकि इसके जीडीपी का 4.6 प्रतिशत बैठता है। इसमें से सरकारी स्वास्थ्य व्यय 21,439 करोड़ रुपए था (0.94 प्रतिशत), निजी स्वास्थ्य व्यय 81,810 करोड़ रुपए (3. 58 प्रतिशत) था और विदेशी सहायता 2,485 करोड़ रुपए (0.11 प्रतिशत) की थी। सामान्य अर्थों में प्रति व्यक्ति स्वास्थ्य व्यय जो 1993–94 में 89 रुपए था, वह 2003–04 में बढ़कर 214 रुपए तथा वास्तविक अर्थों में 122 रुपए हो गया। इन आंकड़ों को दृष्टिगत रखते हुए इस बात में कोई आश्चर्य नहीं होना चाहिए कि सरकारी स्वास्थ्य सेवाओं की पहुंच और गुणवत्ता वांछित स्तर से निम्न स्तर की रही है।

स्वास्थ्य सेवाएं और चिकित्सा कार्मिक: यद्यपि भारत पिछले छः दशकों में स्वास्थ्य मानकों में काफी सुधार लाने में सफल रहा है, उत्तम स्वास्थ्य देखभाल की पहुंच से जुड़ी समस्याएं तथा कुशल चिकित्सा कार्मिकों की कमी अभी भी बनी हुई है। 2007 में आंकड़ो के अनुसार भारत में 6.9 लाख पंजीकृत एलोपैथिक डाक्टर, 7.2 लाख आयूष डाक्टर, 15 लाख नर्सें तथा 6.8 लाख फार्मेसिस्ट मौजूद थे। यद्यपि एक विकासशील देश के लिए वास्तविक संख्या बहुत कम नहीं है, भारत की विशाल जनसंख्या को देखते हुए ये संख्याएं नाकाफी प्रतीत होती हैं।

चित्र 33: केन्द्र और राज्यों द्वारा प्रति व्यक्ति स्वास्थ्य व्यय में वृद्धि

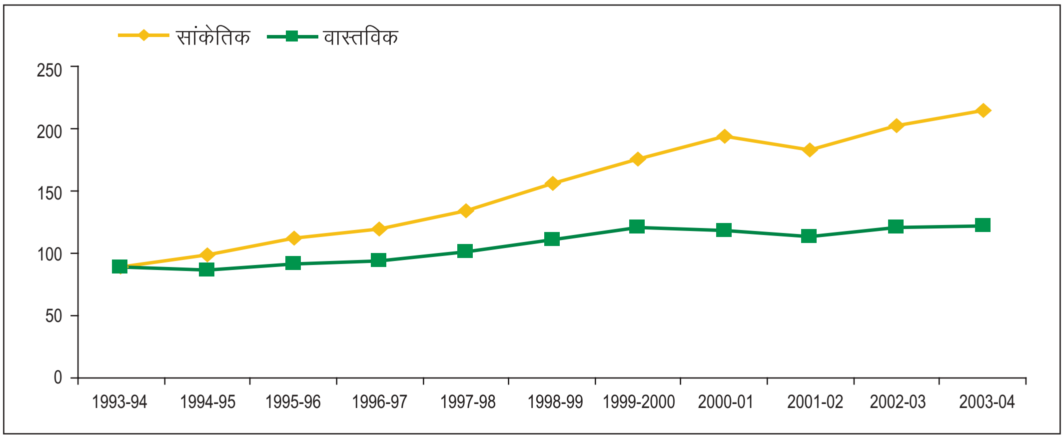

चित्र 34: प्रति 1000 जनसंख्या के पीछे डाक्टरों की संख्या

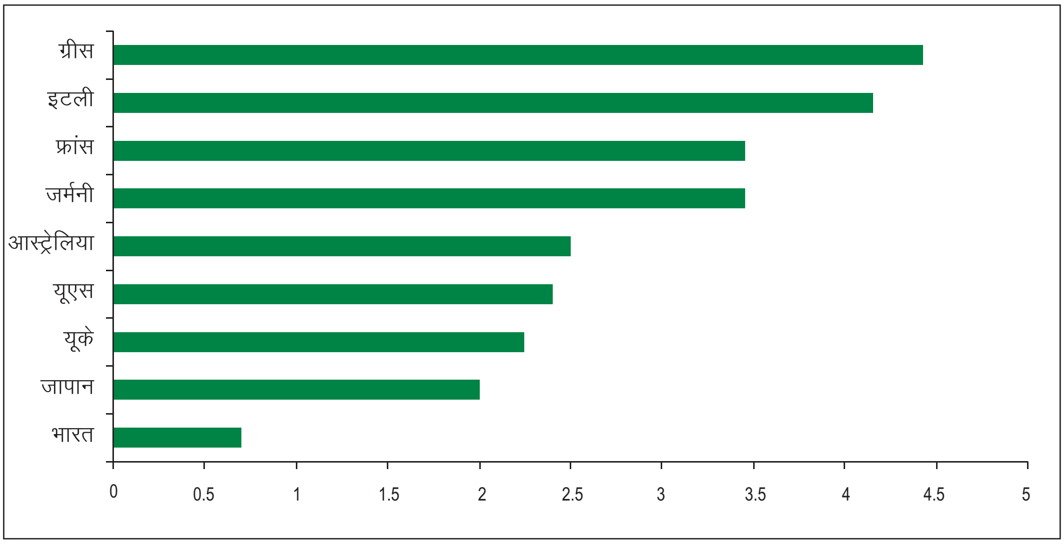

स्रोतः जर्नल आफ रायल सोसायटी आफ मेडीसीन खंड 99, जून 2006

प्रबंध शिक्षा

प्रस्तावना

हाल के वर्षों में निजी पूंजी के माध्यम से अभूतपूर्व संख्या में तकनीकी और प्रबंध संस्थान स्थापित किए जा रहे हैं। प्रबंध शिक्षा के क्षेत्र में भारत में अवर–स्नातक और स्नातकोत्तर स्तर के पाठ्यक्रम प्रदान करने वाले लगभग 1200 संस्थान हैं। क्योंकि इन संस्थानों द्वारा तैयार किए गए प्रबंध स्नातक और स्नातकोत्तर मुख्यतः उद्योग में खपा लिए जाते हैं, इसलिए यह अधिकाधिक रूप से जरूरी है कि प्रबंध शिक्षा की पाठ्यचर्या तथा संरचना को सुमेलित किया जाए ताकि वह भारत की जरूरतों के प्रति तथा देश के भीतर औद्योगिक और सेवा क्षेत्रों में होने वाले बदलावों के लिए और अधिक अनुकूल बन सके। इसके अलावा विभिन्न संस्थानों द्वारा छात्रों को प्रदान की जा रही प्रबंध शिक्षा के स्तर का समुचित आकलन किया जाना महत्वपूर्ण है।

मौजूदा परिदृश्य

2006–07 में भारत में 1100 से अधिक बिजनेस स्कूल थे जिनमें से 5 निजी सहायताप्राप्त संस्थान थे, 903 निजी गैर–सहायताप्राप्त तथा 149 सरकारी संस्थान थे।

चित्र 35: प्रबंध संस्थानों की संख्या (2006–07)

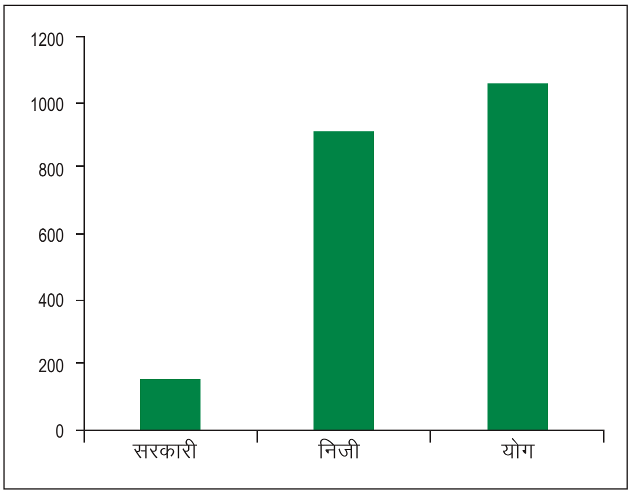

स्रोतः एमएचआरडी

पिछले दशक में देश के भीतर प्रबंध शिक्षा में दाखिलों में उल्लेखनीय वृद्धि देखने में आई है। संस्थानों की मौजूदा दाखिला क्षमता लगभग 92,000 है और अधिकांश छात्र निजी प्रबंध स्कूलों में दाखिल हैं।

प्रबंध संस्थानों का विभाजन क्षेत्रीय असंतुलन की स्थिति दर्शाता है, 86 प्रतिशत कालेज उत्तर और दक्षिण भारत में केन्द्रित है। किसी राज्य में स्कूलों की संख्या तथा उसके आर्थिक और औद्योगिक विकास के बीच एक सह–संबंध दीखता है। राज्य के विकास में क्षेत्रीय असंतुलन तथा प्रबंध शिक्षा के लिए क्षमता के सृजन––ये दोनों बातें संभवतः एक–दूसरे से जुड़ी हैं।

क्षमता का एक बड़ा हिस्सा देश के भीतर विभिन्न स्थानों पर आयोजित अखिल भारतीय प्रतियोगी परीक्षाओं के माध्यम से भरा जाता है। इसलिए राज्य के लिए प्रति व्यक्ति उच्च सीट क्षमता का अर्थ यह नहीं हो जाता कि उस राज्य के अभ्यर्थियों के लिए अवसरों की उच्चतर उपलब्धता होगी। प्रत्येक एक लाख की आबादी के पीछे प्रति व्यक्ति सीट अंशतः प्रबंध स्नातकों को खपाने की राज्य की उच्चतर क्षमता की द्योतक हो सकती है।

चित्र 36: प्रबंध कालेजों में दाखिले (2006–07)

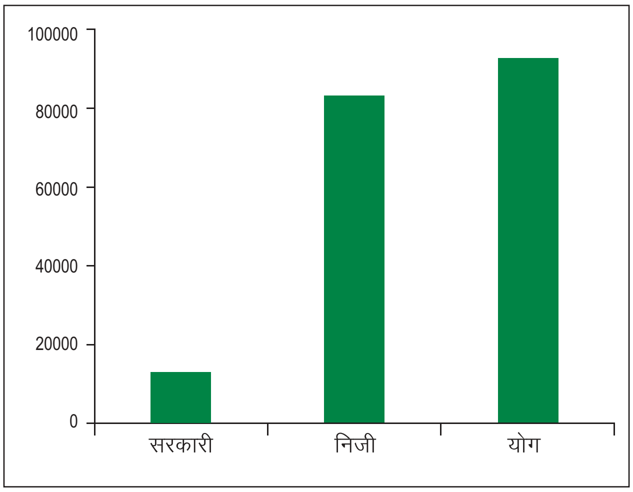

स्रोतः एमएचआरडी

चित्र 37: प्रबंध कालेजों का क्षेत्रीय विभाजन (2006–07)

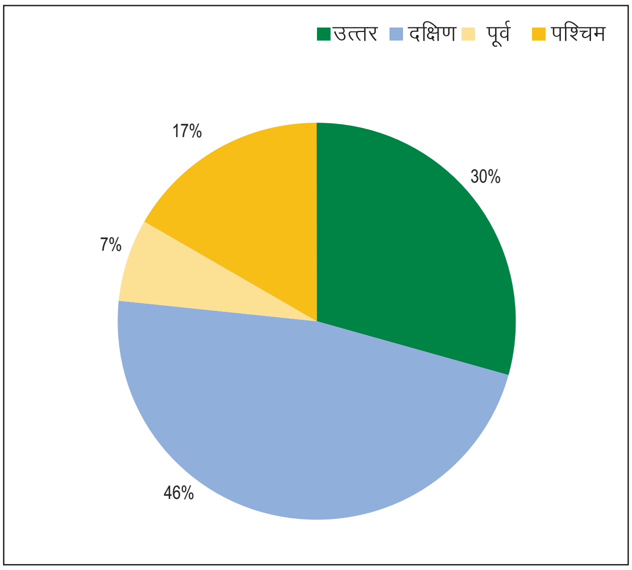

स्रोतः एमएचआरडी

बिजनेस स्कूलों की संख्या में वृद्धि में पिछले दो दशकों में तेजी आई है। भारतीय अर्थव्यवस्था में वृद्धि की दर में आई तेजी के कारण बिजनेस स्कूलों की संख्या में वृद्धि में आई तेजी शिक्षा में वाणिज्यिक अवसरों का लाभ उठाने की प्रवर्तकों की उद्यमशीलता पहल की भी परिचायक है। प्रबंध स्नातकों की मांग और आपूर्ति में असंतुलन के फलस्वरूप प्रबंध शिक्षा में एक अत्यधिक वाणिज्यिक और स्वार्थसाधक वातावरण बन गया है। यह स्पष्ट नहीं है कि हाल में खोले गए कितने संस्थान मात्र संदिग्ध हैं और कितने गंभीरता से प्रबंध शिक्षा के प्रति प्रतिबद्ध हैं। यह भी स्पष्ट नहीं है कि कितने ऐसे हैं जो अखिल भारतीय तकनीकी शिक्षा परिषद द्वारा निर्धारित मानदंडों और मानकों की पूर्ति करते हैं। विनियामक तंत्र तथा कार्यान्वयन शैक्षिक गुणवत्ता के अर्थों में उद्यमशीलता पहल को निष्पादन के साथ जोड़ने में असमर्थ रहा है। इसमें एक नियंत्रण परिप्रेक्ष्य है जो शिक्षा के स्तर, अनुसंधान, सुलभता, लागत प्रभाविता अथवा प्रासंगिकता जैसी उपलब्धियों पर नहीं बल्कि भूमि, संकाय तथा अन्य आधारिक सुविधाओं पर केन्द्रित रहा है।

तालिका 15: भारत में 1950–2006 के दौरान बिजनेस स्कूलों की वृद्धि

अवधि	जोड़े गए बिजनेस स्कूलों की संख्या	औसत वार्षिक वृद्धि
1950–80 (30 वर्ष)	118	4
1980–95 (15 वर्ष)	304	20
1995–2000 (5 वर्ष)	322	64
2000–2006 (6 वर्ष)	1017	169

स्रोतः दयाल I 'डेवलपिंग मैनेजमेंट एजूकेशन इन इंडिया' *जर्नल आफ मैनेजमेंट रिसर्च,* 2(2) अगस्त, 2002, पृष्ठ 101

चित्र 38: प्रति एक लाख आबादी के पीछे राज्य–वार एमबीए/पीजीडीबीएम सीटें

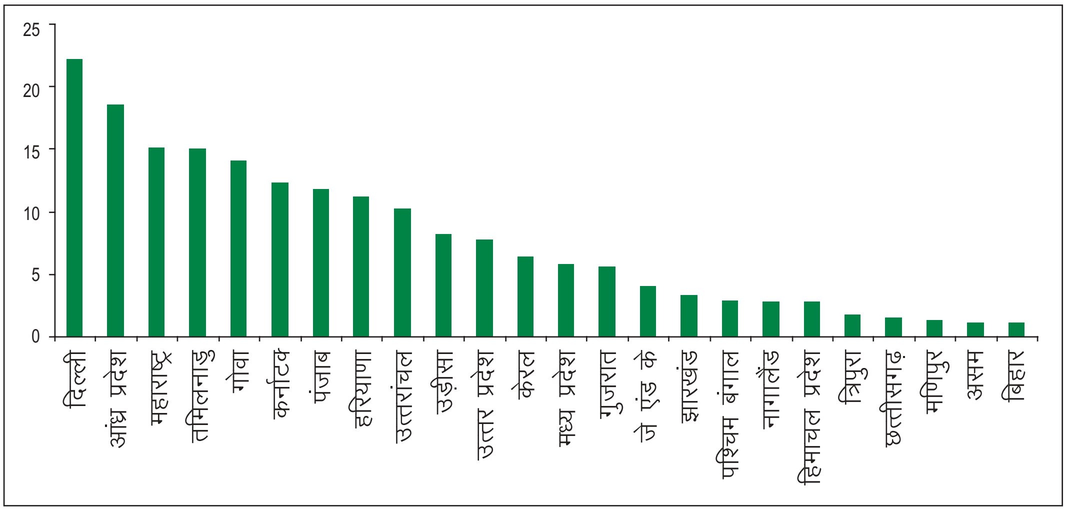

स्रोतः राष्ट्रीय ज्ञान आयोग के प्रबंध शिक्षा संबंधी कार्यकारी दल की रिपोर्ट

इंजीनियरी शिक्षा

प्रस्तावनाः

आर्थिक उन्नति और प्रौद्योगिकी के विस्तार के कारण इंजीनियरों की मांग में कई गुना वृद्धि हुई है। इसे इंजीनियर कालेजों में दाखिलों में वृद्धि तथा भारत में इंजीनियरी संस्थानों की संख्या में वृद्धि के साथ सुमेलित किया गया है। तथापि इंजीनियरों के लिए विशेष रूप से सूचना प्रौद्योगिकी तथा बिजनेस प्रोसेस आउटसोर्सिंग के क्षेत्र में बढ़ते हुए अवसरों को ध्यान में रखते हुए और अधिक विस्तार की गुंजाइश है। एक नैस्काम रिपोर्ट के अुनसार 2010 तक 500,000 ज्ञान कार्मिकों की कमी अनुमानित की गई है जिसमें से 70 प्रतिशत बीपीओ उद्योग में होगी। इसके साथ–साथ इंजीनियरी संस्थानों और इंजीनियरी स्नातकों के स्तर में सुधार लाए जाने की भी जरूरत है। कुछेक सर्वोत्कृष्ट संस्थानों को छोड़कर भारत में इंजीनियरी शिक्षा अक्सर पुरानी और अप्रासंगिक समझी जाती है। अधिकांश स्नातकों के पास अपेक्षित कौशल नहीं होते और उद्योग उत्तम स्तर के प्रशिक्षित इंजीनियरों की कमी लगातार झेल रहे हैं। साथ ही अनेक संस्थान जिनमें शीर्षस्थ संस्थान शामिल हैं उत्तम संकाय को आकृष्ट करने और बनाए रखने में असफल रहते हैं। इंजीनियरी संस्थानों में इन कमियों के साथ तात्कालिक आधार पर निपटे जाने की जरूरत है ताकि यह सुनिश्चित हो सके कि भारत को महत्वपूर्ण अवसरों से हाथ न धोना पड़े।

मौजूदा परिदृश्य

नामांकनः इंजीनियरी शिक्षा में नामांकन में पिछले दशक में तेज वृद्धि देखने में आई है। 2005–06 में कुल नामांकन 795120 था जोकि उच्चतर शिक्षा के कुल नामांकन का 7.21 प्रतिशत बैठता है।

संस्थानः स्नातक स्तर पर इंजीनियरी संस्थानों की संख्या में उल्लेखनीय वृद्धि हुई है। जहां 1980–81 में ऐसे संस्थानों की संख्या 158 थी, 2006–07 में वह बढ़कर 1512 तक पहुंच गई। पिछले दशक में इस विस्फोटक वृद्धि का प्रमुख कारण निजी (सहायताप्राप्त तथा साथ ही स्व–वित्तपोषी) संस्थानों का प्रवेश रहा है। मांग में वृद्धि के कारण समय के साथ–साथ प्रत्येक संस्थान में दाखिल किए जाने वाले छात्रों की औसत स्वीकृत संख्या में भी बढ़ोतरी हुई है।

संस्थानों की वृद्धि में निजी क्षेत्र के निवेश की बहुत बड़ी भूमिका रही है। तथापि ऐसे अनेक निजी संस्थानों का स्तर

चित्र 39: इंजीनियरी दाखिलों में समय श्रृंखला प्रवृत्ति

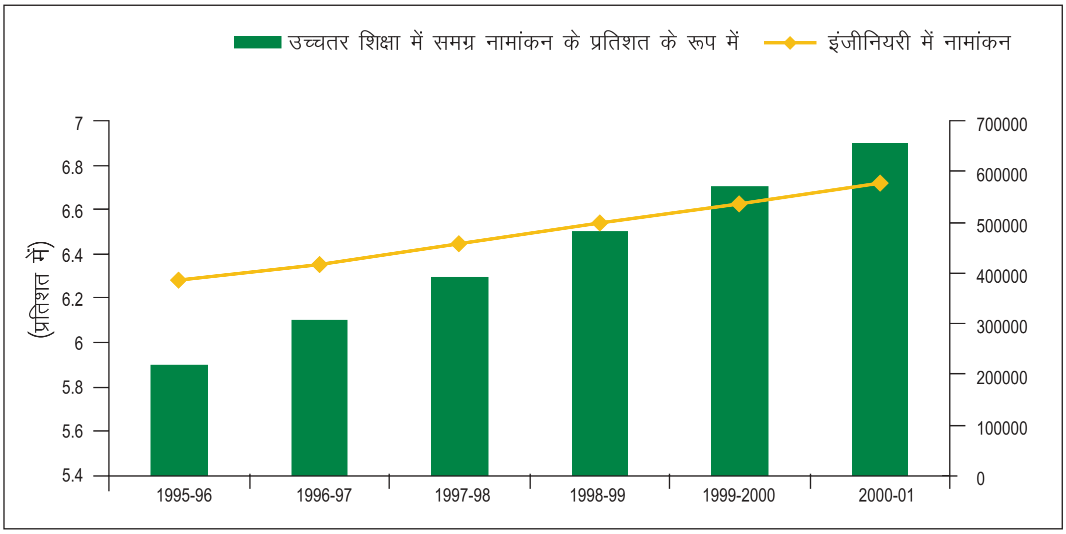

स्रोतः यूनिवर्सिटी डेवलपमेंट इन इंडिया, 1995–96 से 2000–01, यूजीसी

चित्र 40: इंजीनियरी संस्थानों में वृद्धि

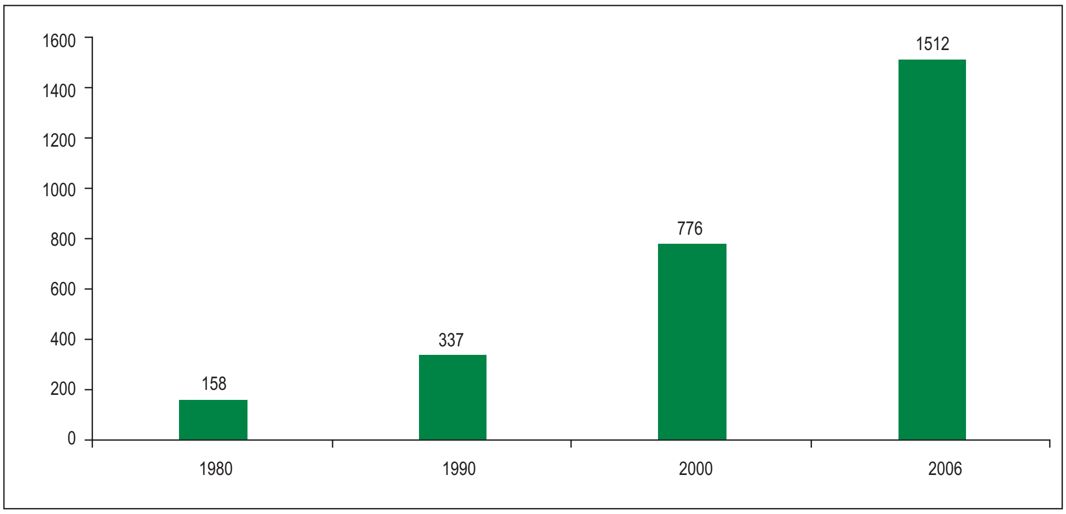

स्रोतः यूजीसी

संदिग्ध रहा है। देश के भीतर क्षेत्रीय असंतुलन पैदा हो जाने के पीछे यह भी एक प्रमुख कारण रहा है।

क्षेत्रीय असंतुलनः हालांकि आज की स्थिति में इंजीनियरी संस्थानों की संख्या 1500 से अधिक है, संस्थानों के क्षेत्र–वार विभाजन और दाखिल किए जाने वाले छात्रों की स्वीकृत संख्या संबंधी डाटा क्षेत्रीय विषमता का परिचायक है। जहां एक ओर उत्तरी क्षेत्र में 268 संस्थान हैं, पूर्वी क्षेत्र में केवल 9 संस्थान है। नागालैंड, अंडमान और निकोबार, दमन और दीव के अंतिम छोर में एक भी इंजीनियरी संस्थान नहीं है। सात भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थानों में से तीन उत्तर (दिल्ली, कानपुर तथा रुड़की) में, दो पूर्व में (खड़गपुर तथा गुवाहाटी) तथा दो दक्षिण (चेन्नई और मुंबई) में स्थित हैं।

संकायः इंजीनियरी संस्थानों की तेज वृद्धि और उसके साथ–साथ अध्यापकों की अपर्याप्त आपूर्ति ने मिलकर इंजीनियरी विषयक्षेत्रों और संस्थानों के बीच संकाय की कमी की स्थिति पैदा कर दी है। भारत में इंजीनियरी में संकाय क्षमता लगभग 67,000 है। एआईसीटीई की समीक्षा समिति की 2003 की रिपोर्ट के अनुसार दाखिल किए जाने वाले छात्रों की स्वीकृत संख्या में वृद्धि के कारण संकाय की मांग लगभग 95,924 बढ़ गई है। इस कारण शिक्षण की मांग की पूर्ति करने में 26,000 से अधिक इंजीनियरी डाक्टरेटों की तथा 30,000 इंजीनियरी स्नातकोत्तरों की कमी पैदा हो गई है।

चित्र 41: प्रत्येक संस्थान में दाखिल किए जाने वाले छात्रों की औसत स्वीकृत

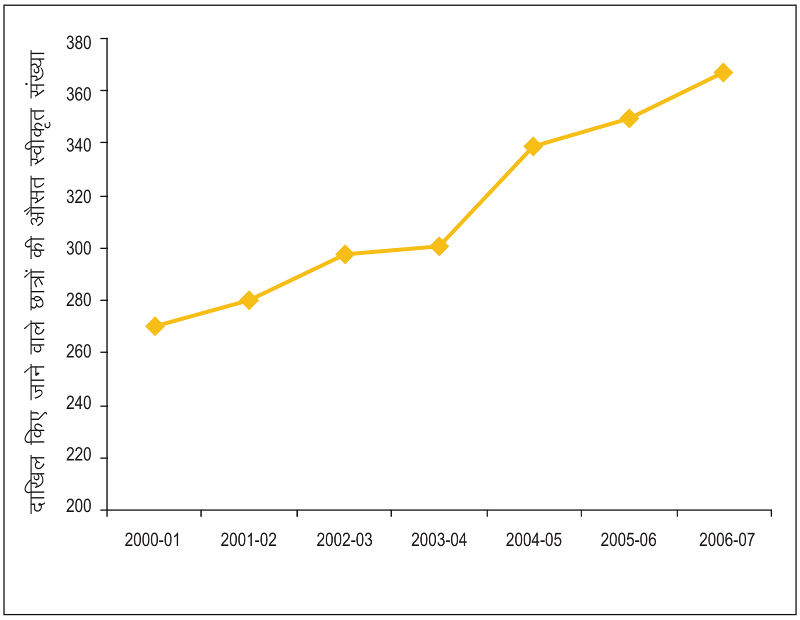

स्रोतः एआईसीटीई

चित्र 42: दाखिल किए जाने वाले छात्रों की संख्या के हिसाब से संस्थानों का हिस्सा (2006–07)

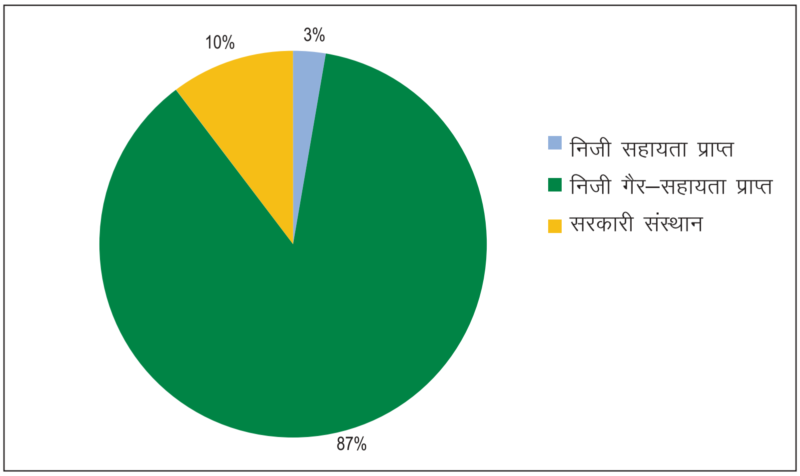

स्रोतः एआईसीटीई

चित्र 43: 2006–07 में इंजीनियरी संस्थानों का क्षेत्र–वार विभाजन

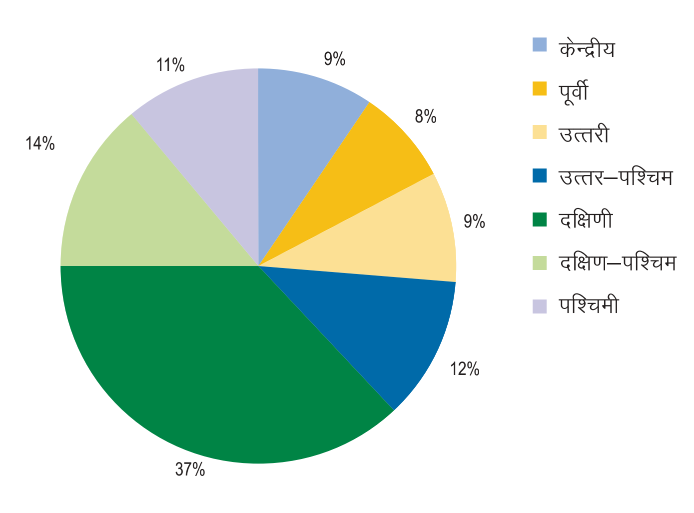

स्रातः एआईसीटीई

गुणवत्ताः भारत में इंजीनियरी शिक्षा का आकार पिरामिडी है, जहां कुछ संस्थान शिखर पर हैं तथा संस्थानों का एक बहुत बड़ा अनुपात पिरामिड के निचले भाग में है। भारत में इंजीनियरी शिक्षा के स्तर में सुधार लाने के लिए अपेक्षित महत्वपूर्ण इन्पुट हैः नमनशील संस्थान, विश्वस्तरीय आधारिक–तंत्र, प्रासंगिक पाठ्यचर्या, उत्तम संकाय और उद्योग के साथ तालमेल। उद्योग की कौशलों की मांग की पूर्ति करने की दृष्टि से मौजूदा इंजीनियरी स्नातक अक्सर असुसज्जित पाए जाते हैं––मैकिन्जी ग्लोबल इंस्टीट्यूट द्वारा किए गए एक सर्वेक्षण से यह पता चला कि बहुराष्ट्रीय कंपनियों ने भारत के केवल 25 प्रतिशत इंजीनियरों को रोजगार के योग्य पाया।

अनुसंधानः हमारे देश में इंजीनियरी तथा प्रौद्योगिकी में स्नातकोत्तर शिक्षा देरी से शुरू हुई। भारत की स्वतंत्रता प्राप्ति के समय केवल छः संस्थान इंजीनियरी तथा प्रौद्योगिकी में लगभग 70 छात्रों को स्नातकोत्तर कार्यक्रमों की पेशकश करते थे। 2003 में दाखिल किए जाने वाले 26,000 से अधिक छात्रों की स्वीकृत क्षमता सहित 321 संस्थानों में 1552 स्नातकोत्तर इंजीनियरी कार्यक्रमों को मान्यता प्रदान की गई। 2004–05 में इंजीनियरी में केवल 968 डाक्टरेट डिग्रियां प्रदान की गई जिनमें से अधिकांश भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान द्वारा अथवा भारतीय विज्ञान संस्थान, बंगलौर द्वारा प्रदान की गई थीं।

मुक्त और दूरस्थ शिक्षा

प्रस्तावना

दूरस्थ शिक्षा मुक्त विश्वविद्यालयों द्वारा प्रदान की जाती है और पत्राचार पाठ्यक्रम परंपरागत विश्वविद्यालयों के दूरस्थ शिक्षा संस्थानों (डीईआई) द्वारा प्रदान किए जाते हैं। भारत में उच्चतर शिक्षा में दाखिल लगभग 1/5 छात्र दूरस्थ पद्धति से अर्थात मुक्त विश्वविद्यालयों के माध्यम से अथवा परपरागत विश्वविद्यालयों के पत्राचार पाठ्यक्रमों के जरिए शिक्षा प्राप्त कर रहे हैं। भारत में उच्चतर शिक्षा में जिस त्वरित विस्तार की अपेक्षा की जाती है, उसे ध्यान में रखते हुए उच्चतर शिक्षा के लिए बढ़ी हुई मांग की पूर्ति करने में मुक्त और दूरस्थ शिक्षा एक अत्यंत महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वाह कर सकती है। इसके अलावा विशेष रूप से मुक्त कोर्सवेयर के रूप में प्रौद्योगिकी को लेकर अभूतपूर्व अवसर मौजूद हैं।

मौजूदा परिदृश्य

नामांकनः 2004–05 में भारत में उच्चतर शिक्षा में लगभग ग्याहर मिलियन लोग दाखिल थे जिनमें से मुक्त और दूरस्थ शिक्षा प्रणाली (परंपरागत कालेजों के दूरस्थ शिक्षा संस्थानों (डीईआई) द्वारा प्रस्तुत पत्राचार पाठ्यक्रमों सहित) ने लगभग 20 प्रतिशत लोगों को उच्च शिक्षा उपलब्ध कराई। इसके भीतर मुक्त विश्वविद्यालयों ने उच्चतर शिक्षा की मांग में से 10 प्रतिशत की पूर्ति की। नीचे दिया गया चित्र 1996 से लेकर 2004 तक उच्चतर शिक्षा तथा मुक्त और दूरस्थ शिक्षा में नामांकन में वृद्धि दर्शाता है। 2000–01 में उच्चतर शिक्षा की केवल 4 प्रतिशत मांग की पूर्ति मुक्त विश्वविद्यालयों द्वारा की गई जबकि 2003–04 में इस आशय का अनुपात लगभग 10 प्रतिशत था जबकि दूरस्थ शिक्षा का समग्र योगदान लगभग उन्नीस प्रतिशत है। नीचे दिया गया चित्र मुक्त विश्वविद्यालयों द्वारा तथा परंपरागत विश्वविद्यालयों के पत्राचार पाठ्यक्रमों द्वारा दूरस्थ शिक्षा को किया गया योगदान भी दर्शाता है।

चित्र 44: मुक्त और दूरस्थ शिक्षा (ओडीई) का योगदान

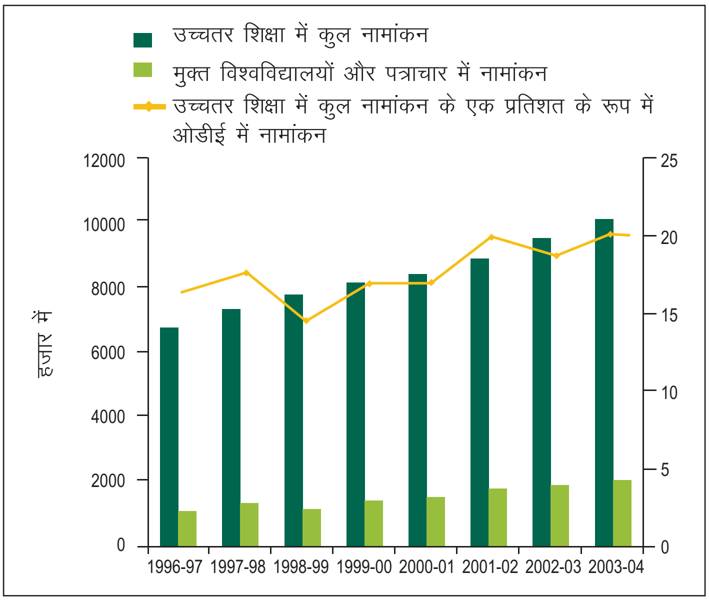

स्रोतः एमएचआरडी

चित्र 45: मुक्त विश्वविद्यालयों और पत्राचार पाठ्यक्रमों में नामांकन

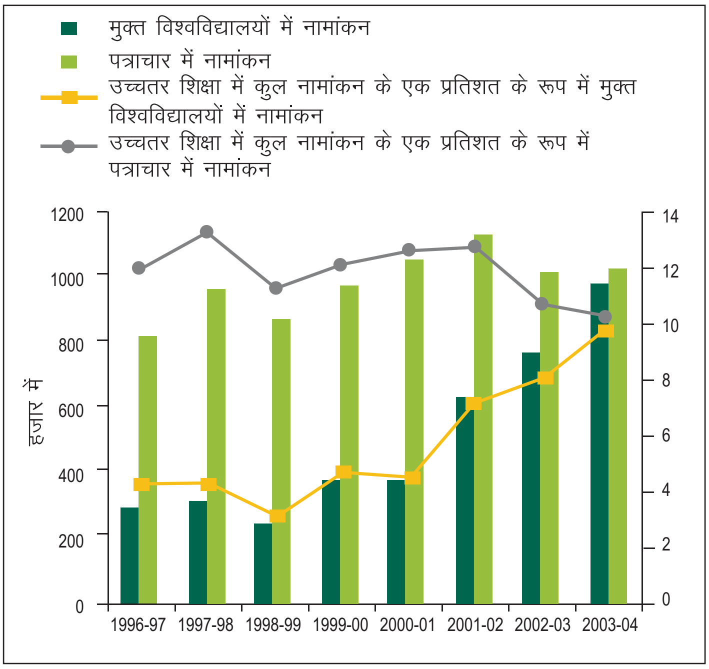

स्रोतः एमएचआरडी

संस्थानः भारत में 14 मुक्त विश्वविद्यालय है——13 राज्य मुक्त विश्वविद्यालय और एक राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय——इंदिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय (इग्नू)। इग्नू में संचयी नामांकन लगभग 15 लाख है, यह विश्वविद्यालय कुल 126 कार्यक्रमों की पेशकश करता है और इसमें शिक्षण स्टाफ 325 तथा 1157 है। पत्राचार पाठ्यक्रमों के माध्यम से दूरस्थ शिक्षा अन्य नियमित विश्वविद्यालयों द्वारा भी प्रदान की जाती है। आज की स्थिति में परंपरागत विश्वविद्यालयों में 119 पत्राचार पाठ्यक्रम संस्थान (सीसीआई) है। 2003 में मुक्त विश्वविद्यालय उच्चतर शिक्षा में कुल नामांकन में से केवल आठ प्रतिशत को जबकि पत्राचार पाठ्यक्रम उच्चतर शिक्षा में कुल नामांकन में से लगभग 1/5 को शिक्षा उपलब्ध कराते थे।

गुणवत्ताः पत्राचार पाठ्यक्रमों के माध्यम से प्रदान की जाने वाली शिक्षा का स्तर और आपूर्ति तंत्र अपेक्षतया घटिया है। अधिकांश पत्राचार पाठ्यक्रम उच्चतर शिक्षा की पूरी न हुई मांग को दृष्टिगत रखते हुए संसाधन सृजन की एक पद्धति के रूप में शुरू किए जाते हैं। इसके अलावा इस प्रकार अर्जित किए गए संसाधनों का प्रयोग पत्राचार कार्यक्रमों के सुधार के लिए नहीं किया जाता। इसलिए गुणवत्ता संबंधी चिंताएं संख्या और आय के सामने गौण पड़ जाती हैं। गुणवत्ता नियंत्रण और विनियमन के अपर्याप्त तंत्रों के कारण नियमित और पाठ्यचर्या पाठ्यक्रमों——दोनों से निकलने वाले स्नातकों को एक ही डिग्री मिलती है जबकि शिक्षाशास्त्रीय प्रक्रिया और उपलब्धि में भारी अंतर बना रहता है। संसाधनों, शिक्षाशास्त्रीय सहायता की

तालिका 16: मुक्त विश्वविद्यालयों और पत्राचार पाठ्यक्रमों में नामांकन (1996 से 2003)

वर्ष	उच्चतर शिक्षा में कुल नामांकन	मुक्त विश्वविद्यालयों में नामांकन	मुक्त विश्वविद्यालयों में नामांकन (कुल का :)	पत्राचार में नामांकन	मुक्त और दूरस्थ शिक्षा में कुल नामांकन
1996.97	6842598	294947	4.31	819110	1114057
1997.98	7260418	316089	4.35	959228	1275317
1998.99	7705520	247168	3.21	868459	1115627
1999.00	8050607	381862	4.74	971991	1353853
2000.01	8399443	379286	4.52	1055317	1434603
2001.02	8821095	632214	7.17	1123344	1755558
2002.03	9516773	765489	8.04	1012779	1778268

स्रोतः माध्यमिक और उच्चतर शिक्षा विभाग, एमएचआरडी

तालिका 17: भारत में मुक्त विश्वविद्यालयों में नामांकन और अध्यापक (2003—04)

मुक्त विश्वविद्यालय	नामांकन	हाजिरी रजिस्टर में दर्ज छात्र	अध्यापक	बजट रु.	राजस्व प्राप्तियां'
इंदिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय, नई दिल्ली	334315	1187100	307	21170	13950
डॉ. बी. आर. अंबेडकर मुक्त विश्वविद्यालय, हैदराबाद	190320	.	89	3320	27.30
वर्धमान महावीर मुक्त विश्वविद्यालय, कोटा	5999	.	30	355	390.5
नालंदा मुक्त विश्वविद्यालय, पटना	1805	8484	6	948	95.95
यशवंत चव्हाण महाराष्ट्र मुक्त विश्वविद्यालय, नासिक	102642	800587	39	2189	1600
डॉ. बाबा साहेब अंबेडकर मुक्त विश्वविद्यालय, अहमदाबाद	13824	68865	39	.	.
मध्य प्रदेश भोज मुक्त विश्वविद्यालय, भोपाल	192230	192230	36	121.5	1129—04
नेताजी सुभाष मुक्त विश्वविद्यालय, कोलकाता	14734	225244	4	310	175
उत्तर प्रदेश राजऋषि टंडन मुक्त विश्वविद्यालय	8025	22172	11	—	—
कर्नाटक राज्य मुक्त विश्वविद्यालय, मैसूर	19580	33172	63	46	1156
तमिलनाडु मुक्त विश्वविद्यालय, चेन्नई	9361	9361	20	192.9	192.9
	#बजट योजना			* योजनेतर रुपए लाख में	

स्रोतः दूरस्थ शिक्षा परिषद

आपूर्ति तथा विधियों और मूल्यांकन में सुधार लाने के लिए विश्वविद्यालयों द्वारा पत्राचार पाठ्यक्रमों में भारी निवेश किए जाने की जरूरत है।

अंतर्राष्ट्रीय तुलनाएं: समूचे विश्व में अधिकांश विकासशील देशों ने मुक्त विश्वविद्यालयों की जरूरत महसूस की है। फ्रांस और यूके जैसे विकसित देशों ने मुक्त और दूरस्थ शिक्षा का मार्ग प्रशस्त किया है। आनलाइन शिक्षा के मामले में संयुक्त राज्य निर्विवाद नेता बना हुआ है। नीचे दी गई तालिका में विश्व के मेगा महान विश्वविद्यालय, उनके नामांकन तथा बजट संबंधी जानकारी दी गई है।

मौजूदा तंत्र में मुद्दे

1. डिग्री कार्यक्रमों का एक ही रूप और संरचना: मुक्त विश्वविद्यालयों में प्रदत्त मुक्त और दूरस्थ शिक्षा ने अत्यधिक नमनशीलता सहित वैकल्पिक आपूर्ति माडल तैयार कर लिए हैं। फिर भी इसने एक ही रूप और संरचना बनाए रखी है जिसके तहत अंततः डिग्री या डिप्लोमा प्रमाणन प्रदान किया जाता है। हालांकि इस पद्धति का पालन नियोक्ताओं से मान्यता और समाज से स्वीकार्यता प्राप्त करने के उद्देश्य से किया जाता है तो भी इसने प्रणाली को लोगों की गतिशील विकासशील जरूरतों के प्रति संवेदी नहीं बनाया है

2. कार्यस्थल के साथ सीमित संबंध: शिक्षा और विकास के संबंध में शिक्षा आयोग की रिपोर्ट (1964–66) में कार्य संबंधी कौशलों और उत्पादकता पर ध्यान केन्द्रित करते हुए जिस जन शिक्षा पर बल दिए जाने की अपेक्षा की गई थी वह अभी भी सुलभ नहीं हो सकी है और उसे मुक्त और दूरस्थ शिक्षा प्रणाली में निर्मित नहीं किया जा सका है। शिक्षा का संबंध उत्पादकता के साथ जोड़ने की दृष्टि से यह जरूरी है कि अधिगम को मूल्यवर्द्धन के लिए कार्यस्थल संबंधी प्रशिक्षण और शिक्षा के साथ जोड़ा जाए।

3. सीमित कवरेज और सुलभता: हालांकि उच्चतर शिक्षा में मुक्त और दूरस्थ शिक्षा का मौजूदा आकार और हिस्सा महत्वपूर्ण है, फिर भी देश के नागरिकों के लिए जीवनपर्यंत अधिगम की दृष्टि से वह अत्यंत छोटा है।

4. मीडिया के लिए सुलभता की कमी: अध्ययन पाठ्य सामग्री अधिकांश छात्रों के लिए प्रमुख अध्ययन सामग्री का निर्माण करती है। विभिन्न इलेक्ट्रानिक मीडिया का शिक्षाशास्त्रीय प्रयोग अभी भी बहुत सीमित है।

5. समन्वय की कमी: मुक्त स्कूली शिक्षा और मुक्त तथा दूरस्थ उच्चतर शिक्षा द्वारा कवर किए जाने वाले लक्षित समूहों के बीच अतिव्याप्ति है। बाद वाली प्रणाली परिपक्व वयस्कों के लिए है और अनेक मुक्त विश्वविद्यालयों ने आयु की सीमा 21 वर्ष से घटाकर 18 वर्ष कर दी है जिससे कि जिन छात्रों ने बारहवीं कक्षा भी पास नहीं की है उन्हें मुक्त डिग्री कार्यक्रमों में प्रवेश के लिए जरूरी प्रारंभिक पाठ्यक्रमों में दाखिला दिलाया जा सके। क्योंकि मुक्त स्कूल भी परिपक्व वयस्कों की शैक्षिक जरूरतें पूरी करते हैं इसलिए परिपक्व वयस्कों की विविध जरूरतों को पूरा करने के लिए स्कूल और उच्चतर शिक्षा कार्यक्रमों के बीच समन्वय रखा जाना जरूरी है।

तालिका 18: अन्य देशों में मुक्त और दूरस्थ शिक्षा–मेगा विश्वविद्यालय

देश	संस्थान	नामांकन	मिलियन अमरीकी डालर में बजट		इकाई लागत*
पाकिस्तान	एआईओयू	456,126			
तुर्की	अनादोलू	1,187,100	32.4	2000 का बजट	10
चीन	सीसीआरटवीयू	2,300,000			40
फ्रांस	सीएनईडी	184,614	56.0	1995 के आंकड़े	50
भारत	इग्नू	1,187,100	47.0	2004 का बजट	35
कोरिया	केएनओयू	196,402	> 79.0	1995 के आंकड़े	5
यूके	ओयू	203,744	> 300.0	1995 के आंकड़े	50
थाइलैंड	एसटीओयू	181,372	> 46.0	1995 के आंकड़े	30
इंडोनेशिया	यूटी	222,068	> 21.0	1995 के आंकड़े	15

*प्रति छात्र इकाई लागत देश में अन्य विश्वविद्यालयों के लिए औसत के एक प्रतिशत के रूप में

और उत्तम पीएच.डी.

प्रस्तावना

यदि भारत अपने आपको एक ज्ञानवान समाज में बदलना चाहता है तो अनुसंधान और नवाचार की संस्कृति को पुनरुज्जीवित करना सबसे अधिक महत्वपूर्ण है। दीर्घकालीन प्रतियोगी लाभ उठाने के लिए ज्ञान की सभी सीमाओं में उच्चस्तरीय अनुसंधान जरूरी है। तथापि भारत में उच्चतर शिक्षा में वृद्धि के साथ–साथ डाक्टरल छात्रों में तदनुरूपी वृद्धि नहीं हो सकी है। अनुसंधान का गिरता हुआ स्तर तथा देश के भीतर अनुसंधान के ह्रासशील मानक और आधारिक–तंत्र चिंता का एक कारण बने हुए हैं। अपर्याप्त आधारिक–तंत्र तथा उत्तम अनुसंधान करने के लिए मजबूत प्रोत्साहनों की कमी अनुसंधान कार्य के प्रति घटती रुचि के प्रमुख कारण हैं। प्रशासनिक कठिनाइयां, अनुसंधान के लिए पहले से ही नकारात्मक परिवेश को और अधिक दुर्ग्राह्य बना देती हैं।

मौजूदा परिदृश्य

भारत में आजकल हो रहे अनुसंधान की मात्रा अपर्याप्त हैं। 2005–06 में उच्च माध्यमिक में दाखिल 11 मिलियन छात्रों में से केवल 0.64 छात्र अनुसंधान कार्यक्रमों में दाखिल हुए थे। इसके अलावा 2004–05 में प्रदान की गई 17898 डाक्टरेट डिग्रियों में से कला संकाय ने 7532 डिग्री तथा विज्ञान संकाय ने 5549 डिग्रियां प्रदान की। इस प्रकार प्रदान की गई कुल अनुसंधान डिग्रियों में इन दोनों संकायों का समग्र हिस्सा 73 प्रतिशत बैठता है। प्रदान की गई डाक्टरल डिग्रियों की संख्या को लेकर राज्यों के बीच व्यापक विषमताएं भी हैं।

अनुसंधान में भारत का घटिया निष्पादन अन्य देशों के साथ तुलना करने पर भी उजागर हो जाता है। 2002 में प्रति मिलियन आबादी के पीछे यूएसए में 4373, जापान में 5084, जर्मनी में 3208 और यहां तक कि चीन में भी 633 शोधार्थी

चित्र 46: डाक्टरेटों की संख्या में वृद्धिः प्रदान की गई डाक्टरेट डिग्रियों की संकाय–वार संख्या

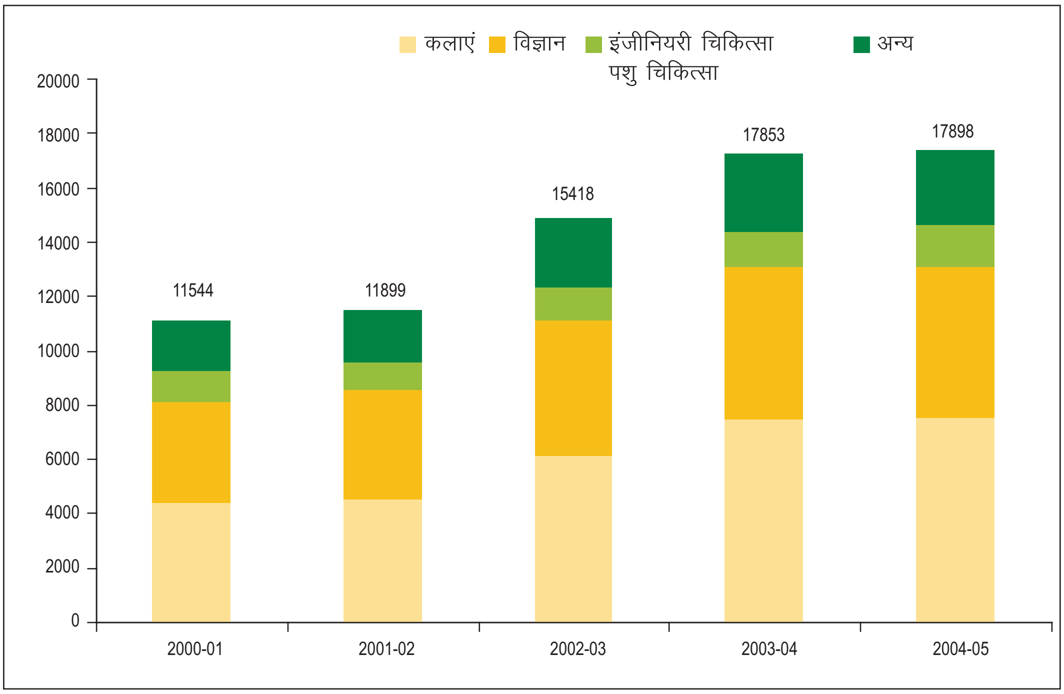

स्रोतः वार्षिक रिपोर्ट 2005–06, विश्वविद्यालय अनुदान आयोग

चित्रः 47 प्रदान की गई पीएच.डी. डिग्रियों का राज्य–वार विभाजन

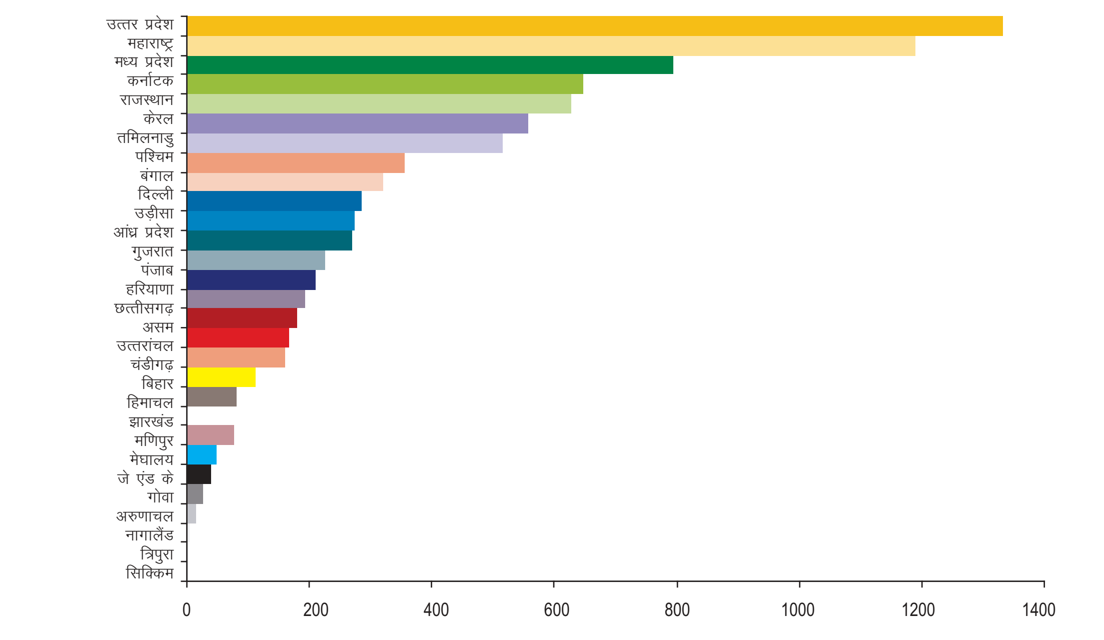

स्रोतः एमएचआरडी, सेलेक्टेड स्टैटिस्टिक्स 2004–05

चित्र 48: अन्य देशों की तुलना में डाक्टरेटों की संख्या में वृद्धि

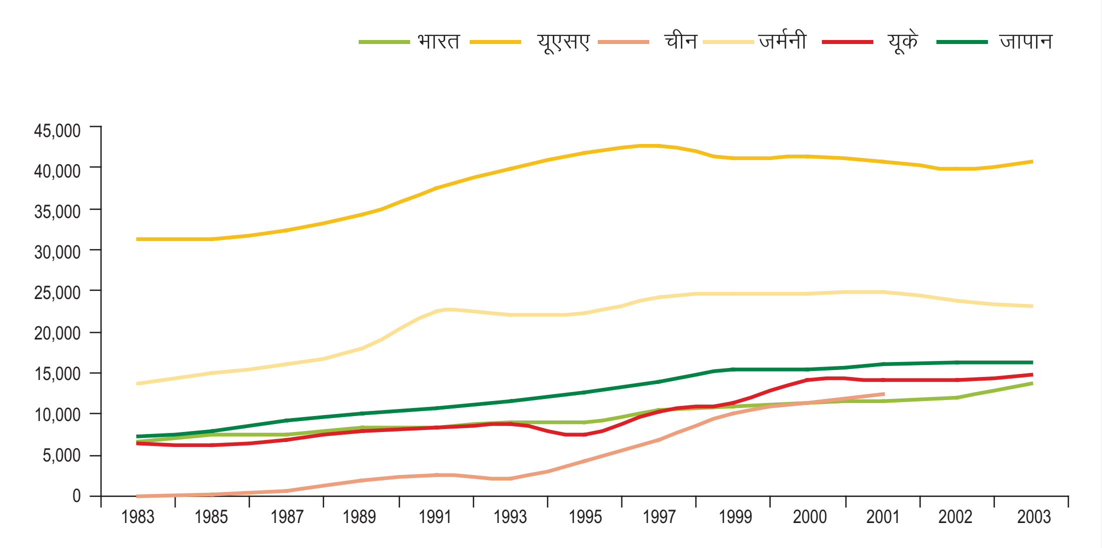

स्रोतः एनएसएफ, साइंस एंड इंजीनियरिंग इन्डीकेटर्स, संलग्नक तालिका 2.42 तथा 2.43

थे जबकि भारत में मात्र 112 थे। इसी प्रकार 1991–2001 के बीच जहां भारत में डाक्टरेटों की संख्या में 20 प्रतिशत की वृद्धि हुई, चीन ने पीएच.डी. में 85 प्रतिशत की, ताइवान ने 57 प्रतिशत की और जापान ने 48 प्रतिशत की शानदार वृद्धि का परिचय दिया।

इसके अलावा नेशनल साइंस फाउंडेशन, यूएसए के अनुसार ऐसे भारतीयों की संख्या जिन्होंने 2003 में विज्ञान और इंजीनियरी में अमरीकी डाक्टरेट डिग्री प्राप्त की वह लगभग 14000 थी और यह संख्या भारत में विज्ञान और इंजीनियरी में डाक्टरेट प्राप्त करने वाले भारतीयों की संख्या से लगभग दुगुनी है। किसी भी विदेशी समूह को कंप्यूटर तथा सूचना विज्ञान में प्रदत अमरीकी डाक्टरेट डिग्रियां प्राप्त करने वालों में भी भारतीयों की संख्या अभी तक की सबसे बड़ी संख्या है। यह तथ्य भारत में अनुकूल अनुसंधान परिवेश की अनुपस्थिति की ओर संकेत करता है।

कृषि में ज्ञान अनुप्रयोग

प्रस्तावना

भारत की आबादी के 60 प्रतिशत से अधिक लोगों के लिए कृषि आजीविका का एक प्रमुख साधन है। जीडीपी में इसके हिस्से में एक क्रमिक गिरावट के बावजूद (जहां 1982–83 में इसका हिस्सा 36.4 प्रतिशत था वह 2006–07 में घटकर 18.5 प्रतिशत रह गया) यह भारत में सबसे अधिक विशाल आर्थिक क्षेत्र बना हुआ है। कृषि को जिन निम्न और उतार–चढ़ाव वाली वृद्धि दरों ने जकड़ रखा है वे भारतीय ग्रामीण ा क्षेत्र के कई हिस्सों में कृषि संकट की परिचायक हैं। कृषि में सरकारी निवेश में कमी आई है और यह क्षेत्र कम/अनाकर्षक लाभ के चलते निजी निवेश आकृष्ट करने में समर्थ नहीं रहा है। निर्धनता का उपशमन करने और राष्ट्रीय स्तर पर खाद्य–सुरक्षा प्राप्त करने के उद्देश्य से कृषि उन्नति को बढ़ावा देने के लिए एक सुविचारित कार्यनीति जरूरी है। कृषि अनुसंधान और विस्तार सेवाओं के माध्यम से ज्ञान का सृजन और उसका अनुप्रयोग उपर्युक्त लक्ष्यों की पूर्ति में एक महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकता है।

मौजूदा परिदृश्य

अनुसंधानः कृषि अनुसंधान और शिक्षा विभाग (डेयर) देश के भीतर कृषि अनुसंधान और शिक्षा की जरूरतों की ओर ध्यान देने के लिए जिम्मेदार है। यह जिम्मेदारी कृषि अनुसंधान और शिक्षा के लिए एक शीर्षस्थ और स्वायत्त संगठन भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद (आईसीएआर) द्वारा वहन की जाती है। डेयर के पास 48 केन्द्रीय संस्थानों, 5 राष्ट्रीय ब्यूरो, 12 परियोजना निदेशालयों, 32 राष्ट्रीय अनुसंधान केन्द्रों और 62 अखिल भारतीय समन्वित अनुसंधान परियोजनाओं सहित एक व्यापक नेटवर्क उपलब्ध है।

शिक्षाः भारतीय कृषि शिक्षा प्रणाली में 40 राज्य कृषि विश्वविद्यालय (एसएयू), 4 आईसीएआर संस्थान (आईएआरआई, आईवीआरआई, एनडीआरआई, सीआईएफई), इलाहाबाद कृषि संस्थान, एक केन्द्रीय कृषि विश्वविद्यालय और चार केन्द्रीय विश्वविद्यालय हैं जिनमें सशक्त कृषि संकाय मौजूद है। बहुत बड़ी संख्या में ऐसे निजी कालेज भी हैं जो एसएयू के साथ संबंधनप्राप्त तथा गैर–संबंधनप्राप्त––दोनों प्रकार के हैं। यूजीसी के अनुसार भारत में कृषि शिक्षा में संप्रति 63962 छात्र दाखिल हैं, उच्चतर शिक्षा में कुल नामांकन में जिनका हिस्सा मात्र 0.58 प्रतिशत बैठता है। नामांकन को लेकर जबरदस्त क्षेत्रीय असंतुलन है, अखिल भारतीय छात्र नामांकन में उत्तर प्रदेश का हिस्सा लगभग 30 प्रतिशत बैठता है। इसके अलावा कृषि अध्ययन अब कोई आकर्षक विकल्प नहीं रह गया है––इसे एक ऐसे घटिया विज्ञान के रूप में समझा जाता है जिसे केवल तब लिया जाता है जब सभी अन्य विकल्प असफल रह जाते हैं।

चित्र 49: 1999–2000 मूल्यों पर कृषि तथा अन्य क्षेत्रों में औसत जीडीपी वृद्धि दरें

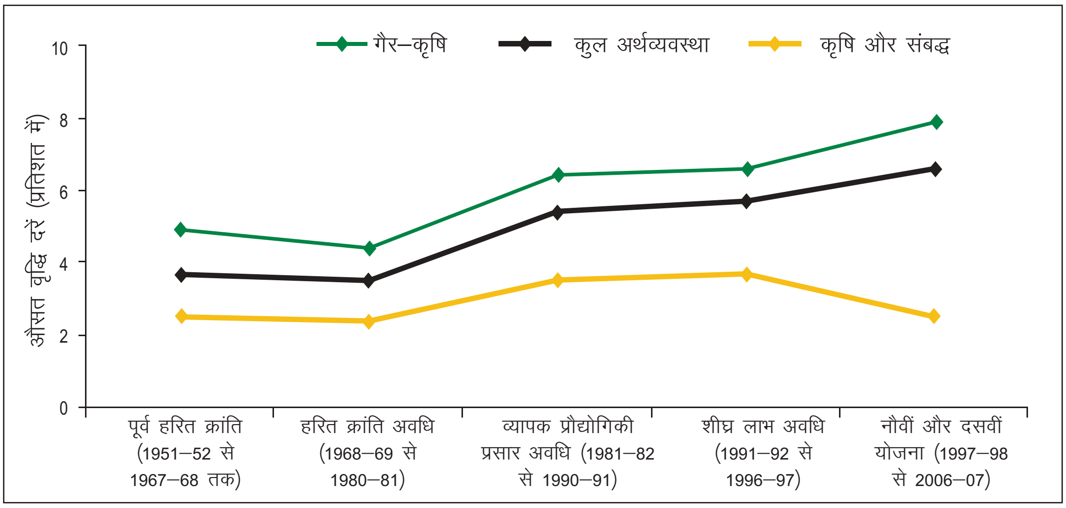

स्रोतः आर्थिक सर्वेक्षण 2007–08

चित्र 50: कृषि में निवेश: जीडीपी के एक प्रतिशत के रूप में कृषि से सकल पूंजी निर्माण

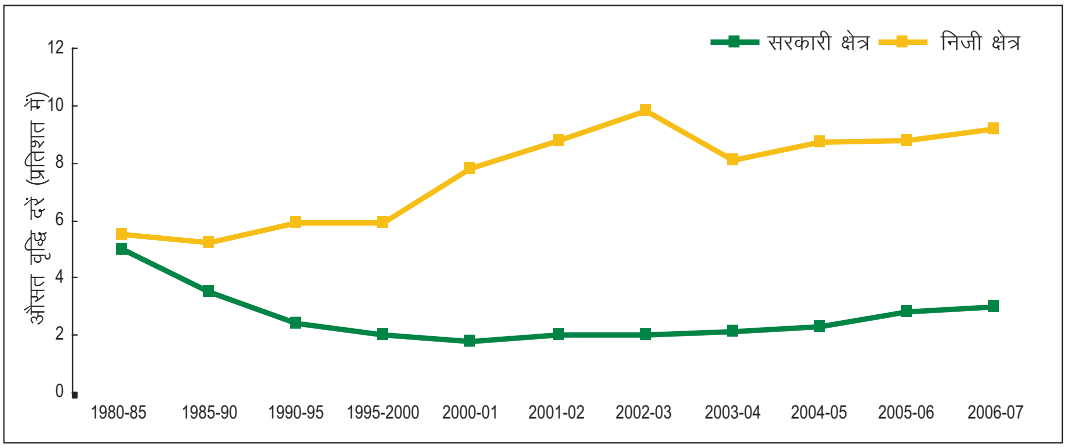

स्रोत: 11वीं पंचवर्षीय योजना, योजना आयोग

चित्र 51: कृषि शिक्षा में नामांकन (2001)

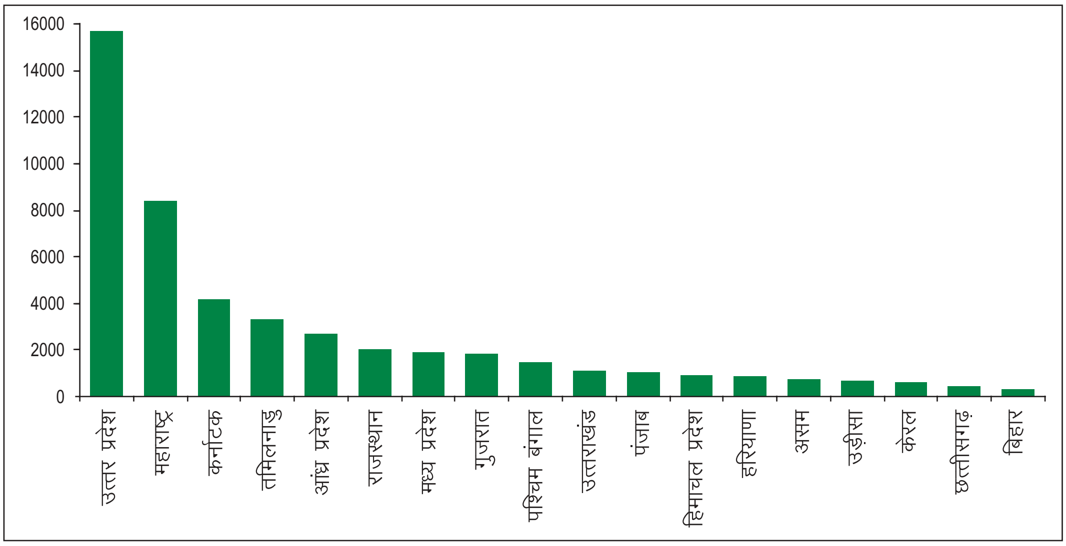

स्रोत: यूनिवर्सिटी डेवलपमेंट इन इंडिया 1995–96 से 2000–01, यूजीसी

विस्तार: कृषि और सहकारिता विभाग (डीएसी) कृषि विस्तार का समन्वय करने वाली केन्द्रीय एजेंसी है। इसके अलावा राष्ट्रीय कृषि विपणन संस्थान (एनआईएएन) तथा राष्ट्रीय कृषि विस्तार प्रबंध संस्थान (मैनेज) ऐसे स्वायत्तशासी निकाय है जिनकी स्थापना सरकार को, विशेष रूप से कृषि अर्थव्यवस्था से जुड़े कार्मिकों द्वारा प्रबंधकीय और तकनीकी कौशलों के अभिग्रहण को सुविधापूर्ण बनाने के लिए और आगे सहायता प्रदान करने के लिए की गई है।

देश के भीतर कृषि विस्तार को बढ़ावा देने के लिए अनेक तंत्र, परियोजनाएं और पहलें स्थापित की गई हैं जिनमें ये शामिल हैं: कृषि प्रौद्योगिकी प्रबंध एजेंसी (एटीएमए), कृषि विज्ञान केन्द्र (केवीके), कृषि (नैदानिक) तथा कृषि–कारोबारी केन्द्र, किसान काल सेंटर स्कीम आदि। विभिन्न विस्तार एजेंसियों के बीच संबंधों में सुधार लाने के उद्देश्य से आधुनिक सूचना और संचार प्रौद्योगिकी का इस्तेमाल करते हुए आर एंड डी क्रियाकलापों को विकेन्द्रीकृत, समाकलित और समन्वित करने के प्रयोजन से विभिन्न जिलों में एटीएमए स्थापित की गई हैं। केवीके की शुरूआत आईसीएआर द्वारा की गई है जिससे कि प्रौद्योगिकीय कमियों, किसानों की प्रमुख जरूरतों और अपेक्षाओं का पता लगाया जा सके और विभिन्न कार्यक्रमों के माध्यम से कौशल प्रदान किए जा सकें। किसानों के खेतों में अद्यतन प्रौद्योगिकीय विकास, आकलन और परिष्कार का प्रदर्शन करने के अलावा केवीके साहित्य, प्रदर्शनियों, क्षेत्र दिवसों, कृषक यात्राओं, फसल संगोष्ठियों, किसान मेलों, रेडियो और दूरदर्शन कार्यक्रमों, पत्राचार सेवाओं, टेलीफोन परामर्श और हेल्पलाइन सेवाओं आदि के माध्यम से फार्म जानकारी सेवाएं भी प्रदान करती हैं। अभी तक (अगस्त, 2007 की स्थिति के अनुसार) 554 केवीके स्थापित किए जा चुके हैं।

तालिका 19: वैश्विक विस्तार परिपाटियां

देश	विस्तार परिपाटियां
संयुक्त राज्य अमरीका, कनाडा, आस्ट्रेलिया, डेनमार्क	मजबूत विस्तार सेवाएं—पहले सरकारी और अब सरकारी तथा/अथवा निजी। इन सभी अत्यंत विकसित देशों में से किसी भी देश ने संसाधन आबंटन के समय विस्तार के विषय क्षेत्र को अन्य कृषि विषय क्षेत्रों की तुलना में घटिया नहीं माना। अनेक विकसित देशों ने अपनी कृषि विस्तार सेवाओं का अनेक तरीकों से पूर्णतः अथवा अंशतः निजीकरण कर दिया है।
कोस्टा राइसा	सरकार किसानों को विस्तार वाउचर प्रदान करती है जिनका प्रयोग निजी विशेषज्ञों से विस्तार सलाह प्राप्त करने के लिए किया जा सकता है।
इंग्लैंड	सरकारी विस्तार सेवा पिछले कुछ समय के भीतर एक निजी परामर्शी परिपाटी बन गई है। इसका एक सकारात्मक परिणाम स्टाफ की संवर्द्धित प्रभाविता है और छोटे किसानों को भुगतान करने की उनकी असमर्थता अथवा अनिच्छा के कारण उन्हें विस्तार सेवाओं से वंचित किया जाना इसका नकारात्मक प्रभाव है।
हालैंड	लगभग 60 प्रतिशत विस्तार बजट किसानों से प्राप्त होता है जबकि बाकी 40 प्रतिशत सरकार द्वारा उपलब्ध कराया जाता है। इसके लाभों में शामिल हैं: बढ़ी हुई प्रभाविता, बेहतर गुणवत्ता, ग्राहक दिशा—अनुकूलन, स्टाफ के लिए कार्य संतोष तथा किसानों के लिए विस्तारित विपणन अवसर।
अलबेनिया	किसानों के साथ एक दीर्घकालीन संबंध स्थापित करने की दिशा में निजी क्षेत्र की उद्यमशीलता पहलें सफल सिद्ध हुई हैं।
युगांडा	इसकी मौजूदा सरकारी विस्तार सेवा में से निजी विस्तार विशेषज्ञों के एक समूह के सृजन के माध्यम से विस्तार का निजीकरण। चुनिंदा उद्यमों से संबंधित सेवाएं उपलब्ध कराने के लिए पंजीकृत कृषक संघ बोली लगाकर तथा विकेन्द्रीकृत सरकारी यूनिटों के माध्यम से दाताओं द्वारा उन्हें प्रदान की गई निधियों में से ऐसी सेवाओं के लिए भुगतान करके इस समूह के साथ संपर्क कर सकते हैं।
इजरायल	सरकार अभी भी विस्तार सलाह देने के लिए जिम्मेदार है लेकिन वह आगे वर्णित तरीकों से निजीकरण को प्रोत्साहित करती है: काश्तकारों की इस आशय की स्थायी परिपाटी कि वे अपनी आय का कुछ हिस्सा विस्तार सहित अनुसंधान और विकास पर खर्च करें, विस्तार सेवा के भीतर यूनिटों के वित्तपोषण तथा प्रचालन में सरकारी—निजी भागीदारी, सेवाओं का भुगतान जिंस उत्पादन द्वारा, जरूरतमंद काश्तकारों के अनुरोध पर और अधिक गहन विस्तार क्रियाकलापों का प्रावधान, जिंस कृषक संगठन के साथ विशेष करार, किसानों द्वारा विस्तार स्टाफ को सीधे भुगतान के एवज में विस्तार स्टाफ द्वारा छुट्टी के दिन काम करना, काश्तकार संघों द्वारा विस्तार सलाहकारों को मोबाइल फोन जैसे उपकरण प्रदान किया जाना तथा प्रशिक्षण क्रियाकलापों में भाग लेने के लिए किसानों द्वारा सीधा भुगतान।
इंडोनेशिया	कुछ परियोजनाओं ने विस्तार सेवाओं की आपूर्ति में भाग लेने के लिए केवल कुछ एनजीओ और निजी क्षेत्र को ही नहीं बल्कि कृषि अनुसंधान संस्थानों, कृषि विश्वविद्यालयों और कृषक संघों को भी प्रोत्साहित किया है। इंडोनेशिया प्रांतीय स्तर पर एग्रीकल्चरल टेक्नोलाजी एसेसमेंट इंस्टीट्यूट नामक नए संस्थान स्थापित करने, किसानों, शोधार्थियों और विस्तार विशेषज्ञों को एक स्थान पर लाने में सफल रहा है।
लाओ जन लोकतांत्रिक गणराज्य, वियतनाम तथा माली	*दूर केन्द्रों* जिन्होंने अनेक पश्चिम यूरोपीय देशों को अपने लाभों से पहले ही परिचित करा दिया है उनके साथ प्रयोग करना। अनुसंधान और विस्तार को एक स्थान पर लाने के लिए वास्तविक संबंध स्थापित किए गए हैं और इसका एक उदाहरण है वर्क आन (वास्तविक विस्तार, अनुसंधान और संचार नेटवर्क) टूल जोकि एफएओ ने मिस्र और भूटान में स्थापित किया है। फिलीपींस में एक एफएओ परियोजना के अधीन नगरपालिका स्तर पर एक इंटरनेट तथा अन्योन्यक्रियापूर्ण ई—मेल सुविधाएं स्थापित कर दी गई हैं जिससे कि विकेन्द्रीकृत विस्तार स्टाफ को सहायता प्रदान की जा सके। किसानों के खेतों में विषय विशेषज्ञों के अत्यधिक कम दौरों की स्थिति की कुछ हद तक प्रतिपूर्ति करने के लिए *विशेषज्ञ प्रणालियां* भी स्थापित की जा रही हैं। इस्टोनिया में 30 प्रतिशत से अधिक विस्तार स्टाफ इंटरनेट का प्रयोग करता है। आप इंटरनेट पर ''वास्तविक बाग'' तथा ''वास्तविक खेत'' जैसे कार्यक्रम देख सकते हैं।

स्रोतः ''मार्डनाइजिंग नेशनल एग्रीकल्चरल एक्सटेंशन सिस्टम्स, ए प्रैक्टिकल गाइड फार पालीसी मेकर्स आफ डेवलपिंग कंट्रीज'', एफएओ 2005

अनुसंधान और विस्तार तंत्र के भीतर मुद्दे

वित्तपोषण: कृषि अनुसंधान तथा विकास के लिए मौजूदा आबंटन जोकि कृषि जीडीपी का 0.7 प्रतिशत है, बहुत ही कम है। अनेक स्थानों पर कृषि आर एंड डी की सरकारी प्रणालियों के विघटन के पीछे निधियों की कमी एक प्रमुख कारण है। आज की स्थिति में लगभग सभी एसएयू में 80–85 प्रतिशत बजट वेतन तथा अन्य स्थापना संबंधी खर्चों पर व्यय हो जाता है। आईसीएआर का हिस्सा भी घटता—बढ़ता रहा है और वह जहां पांचवीं योजना में 33 प्रतिशत था, आठवीं योजना में लगभग 9 प्रतिशत रहा गया है। सभी एसएयू में 25 से 30 प्रतिशत पद बजट में कमी के कारण नहीं भरे जाते और इस कारण शिक्षण के स्तर पर गंभीर प्रभाव पड़ा है। इस क्षेत्र के लिए केन्द्र (जीडीपी के कम से कम एक प्रतिशत तक) तथा राज्यों——दोनों के लिए आबंटनों में भारी वृद्धि किए जाने की जरूरत है।

आधारिक—तंत्र और मानव संसाधन: वित्तीय कमी और उसके साथ—साथ अधिकारी तंत्र की कठोरताओं ने बुनियादी आधारिक—

तंत्र और मानव संसाधन——दोनों में जबरदस्त कमियां पैदा कर दी हैं। जल, बिजली, सेलफोन तथा वैन जैसे बुनियादी उपकरणों की कमी, कृषि विश्वविद्यालयों में वैज्ञानिक पदों की रिक्तियां तथा विस्तार उपलब्ध कराने वाले निकायों में कम वेतन पर रखे गए कामगारों द्वारा अल्प स्टाफ व्यवस्था——ये ऐसी कुछ समस्याएं हैं जिन्होंने सरकारी अनुसंधान और विस्तार यूनिटों को जकड़ा हुआ है।

सरकारी क्षेत्र से बाहर सेवाप्रदाता: फार्मर्स कमीशन रिपोर्ट ने यह प्रमाणित किया कि अखिल भारतीय स्तर पर किसानों के परिवारों में से 40 प्रतिशत के लिए आधुनिक प्रौद्योगिकी सुलभ थी, ''अन्य प्रगतिशील किसान'' सबसे अधिक लोकप्रिय साधन (16.7 प्रतिशत) के रूप में उभरे; जिसके बाद ''इन्पुट डीलरों'' (13.1 प्रतिशत) और ''रेडियो'' (13 प्रतिशत) का स्थान आता है। निजी आर एंड डी संस्थान तथा मांग–चालित विस्तार सेवा प्रदाताओं ने कृषि अर्थव्यवस्था में बड़े जोरदार ढंग से प्रवेश किया है। आर एंड डी प्रदाताओं के प्रतिनिधि के रूप में वे निहित स्वार्थों से अत्यधिक प्रेरित होंगे और इसलिए किसानों के लिए, जिनके पास कोई और विकल्प नहीं है, एक वास्तविक खतरा होंगे। विकल्पतः निजी क्षेत्र में सेवा प्रदाता अधिक विश्वसनीय तंत्र के अभाव में एक महत्वपूर्ण कार्य को प्रभावी रूप में कर सकते हैं।

अनुसंधान–विस्तार संबंध: कृषि वैज्ञानिकों द्वारा किए गए अनुसंधान और किसानों की व्यावहारिक परिपाटियों के बीच अक्सर मेल नहीं पाया जाता (देखें तालिका 20)। मौजूदा सरकारी विस्तार प्रणाली का तंत्र रैखिक और प्रकोष्ठबद्ध है, इस प्रकार ऊपर से नीचे के दृष्टिकोण को बढ़ावा देता है जोकि अनेक कर्ताओं के बीच वैचारिक आदान–प्रदान तथा सहकारिता को प्रोत्साहित नहीं करता। सबसे महत्वपूर्ण बात यह है कि यह फीडबैक के लिए कोई तंत्र शामिल नहीं करता। इसलिए विस्तार कामगार ऐसी प्रौद्योगिकी का प्रसार करने में लगे रहते हैं जो केवल यही नहीं कि असंगत हो सकती हैं बल्कि कृषक समुदाय के लिए हानिकारक भी हो सकती हैं।

सूचना और संचार प्रौद्योगिकी (आईसीटी): हाल के वर्षों में ग्रामीण आबादी के बीच ज्ञान और सूचना के प्रसार के लिए आईसीटी की उपलब्धता तथा अभिसरण——कंप्यूटर, डिजिटल नेटवर्क, दूरसंचार आदि महत्वपूर्ण रहे हैं। एम. एस. स्वामीनाथन रिसर्च फाउंडेशन (एमएसएसआरएफ) द्वारा पांडिचेरी में स्थापित किए गए ग्राम ज्ञान केन्द्र और आईटीसी द्वारा ''ई–चौपाल'' कार्यक्रम के तहत स्थापित किए गए ग्राम इंटरनेट कियोस्क कृषि में अनुसंधान तथा विस्तार और बाजार सुलभता के लिए अत्यंत सफल आईसीटी प्रयोग के उदाहरण हैं।

कृषि विश्वविद्यालय: आर एंड डी क्षेत्र में व्यवस्थागत चुनौतियों का सामना करने के लिए कृषि विश्वविद्यालयों में पाठ्यक्रम और पाठ्यचर्या को अधिक नमनशील तथा अंतःविषयक्षेत्रीय बनाना जरूरी है। पाठ्यचर्या में सामाजिक विज्ञानों और प्रबंध तकनीकों को शामिल करना, क्षेत्रीय कार्य और नियमित प्रशिक्षण को प्राथमिकता देना तथा विस्तार कार्मिकों के लिए पुनश्चर्या पाठ्यक्रमों को पाठ्यचर्या में अवश्य शामिल किया जाना चाहिए जिससे कि प्रयोगशाला और भूमि के बीच बेमेल की स्थिति की ओर ध्यान दिया जा सके। विश्वविद्यालयों में आर तथा डी क्रियाकलापों को प्रोत्साहित करने के निमित्त सर्वोत्तम मस्तिष्कों को आकृष्ट करने के वास्ते प्रोत्साहन और स्कीमें अवश्य स्थापित की जानी चाहिए।

तालिका 20: राज्य–वार निष्पादन तथा चुनिंदा फसलों की संभावित पैदावार

राज्य	सुधरी हुई परिपाटी (आई)	किसान की परिपाटी (एफ)	वास्तविक पैदावार (2003–04) (ए)	कमी (प्रतिशत)	
				आई तथा एफ	आई तथा ए
गेहूं (पैदावार; किलोग्राम/हैक्टेयर ——2002–03 से 2004–05)					
बिहार	3651	2905	1783	25.7	104.8
मध्य प्रदेश	3297	2472	1789	33.4	84.3
उत्तर प्रदेश	4206	3324	2794	26.5	50.5
चावल (सिंचित)					
पैदावार; किलोग्राम/हैक्टेयर–2003–04 से 2004–05					
उत्तर प्रदेश	7050	5200	2187	35.6	222.4
बिहार	4883	4158	1516	17.4	222.1
छत्तीसगढ़	3919	3137	1455	24.9	169.4
गन्ना					
महाराष्ट्र	127440	99520	51297	28.1	148.4
कर्नाटक	147390	128000	66667	15.1	121.2
बिहार	74420	49440	40990	50.5	81.6

बौद्धिक संपदा अधिकार

प्रस्तावना

बौद्धिक संपदा अधिकार (आईपीआर) आज की ज्ञानवान अर्थव्यवस्थाओं और समाजों में, विशेष रूप से आर्थिक वैश्वीकरण के संदर्भ में एक अपरिहार्य कार्यनीतिक साधन के रूप में उभरे हैं। किसी एन्टिटी की वैश्विक बाजार में मुकाबला करने की योग्यता बहुत हद तक विज्ञान और प्रौद्योगिकी में नवाचार के माध्यम से नए विचार पैदा करने की उसकी क्षमता पर निर्भर करती है। अपने स्वामी को एक सीमित अवधि तक एकांतिक एकाधिकार प्रदान करके, आईपीआर नवाचार और आर्थिक मूल्य के सृजन के निमित्त प्रोत्साहन पैदा करने वाले एक प्रमुख तत्व के रूप में उभरा है। एक प्रभावी आईपीआर एक विश्वसनीय कानूनी परिवेश का एक घटक भी है जोकि आगे चलकर विदेशी निवेश और प्रौद्योगिकी अंतरण के संबंध में निर्णय लेने का एक प्रमुख तत्व बन जाता है।

मौजूदा परिदृश्य

पेटेंट प्रवृत्तियां: पेटेंट के लिए फाइल किए गए आवेदन–पत्रों की संख्या को लेकर भारत ने एक उल्लेखनीय वृद्धि का परिचय दिया है। जबकि 1992 में 3467 आवेदन–पत्र दायर किए गए थे, 2006–07 में लगभग 29000 आवेदन–पत्र फाइल किए गए हैं। इसी प्रकार मंजूर किए गए पेटेंटों की संख्या में भी वृद्धि हुई हैं हालांकि कम तेजी से। पिछले पांच वर्षों में मंजूर किए गए पेटेंटों की संख्या में पांच गुना से अधिक की वृद्धि हुई है।

इसके अलावा 2006–07 में दायर किए गए कुल 28940 आवेदन–पत्रों में से केवल 18 प्रतिशत भारतवासियों द्वारा दायर किए गए तथा बाकी विदेशी आवेदक थे। यह स्थिति यूएसए, चीन, फ्रांस, जर्मनी, कोरिया और यूके जैसे देशों की तुलना में अत्यधिक विषमतापूर्ण है जहां घरेलू पेटेंट आवेदन–पत्रों की संख्या विदेशी आवेदन–पत्रों की संख्या की तुलना में कहीं अधिक होती है।

भारत में दायर किए गए पेटेंटों के क्षेत्र–वार विश्लेषण से यह पता चलता है कि दायर किए गए आवेदन–पत्रों की संख्या की दृष्टि से रासायनिक, यांत्रिक और कंप्यूटर क्षेत्र सबसे ऊपर है। तथापि पिछले तीन वर्षों में खाद्य, जैव–प्रौद्योगिकी और इलेक्ट्रिकल उद्योगों ने सबसे अधिक वृद्धि दर्ज की है।

चित्र 52: फाइल किए गए और मंजूर किए गए पेटेंटों की तुलनात्मक प्रवृत्ति

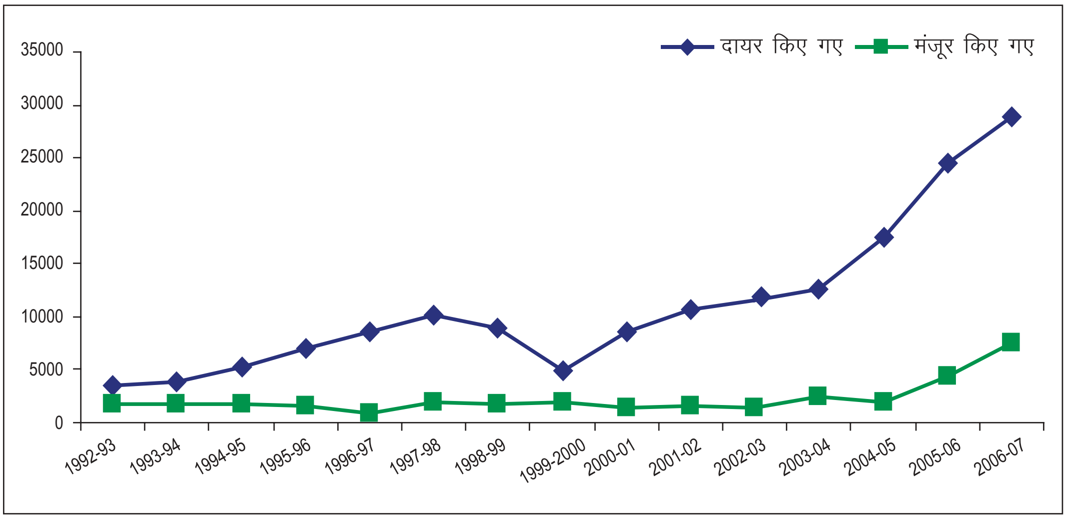

स्रोतः महानियंत्रक पेटेंट, डिजाइन, ट्रेडमार्क के कार्यालय की वार्षिक रिपोर्ट, भौगोलिक संकेत, बौद्धिक संपदा प्रशिक्षण संस्थान तथा पेटेंट सूचना प्रणाली 2006–07

चित्र 53: भारतीयों और विदेशियों द्वारा दायर किए गए आवेदन–पत्र

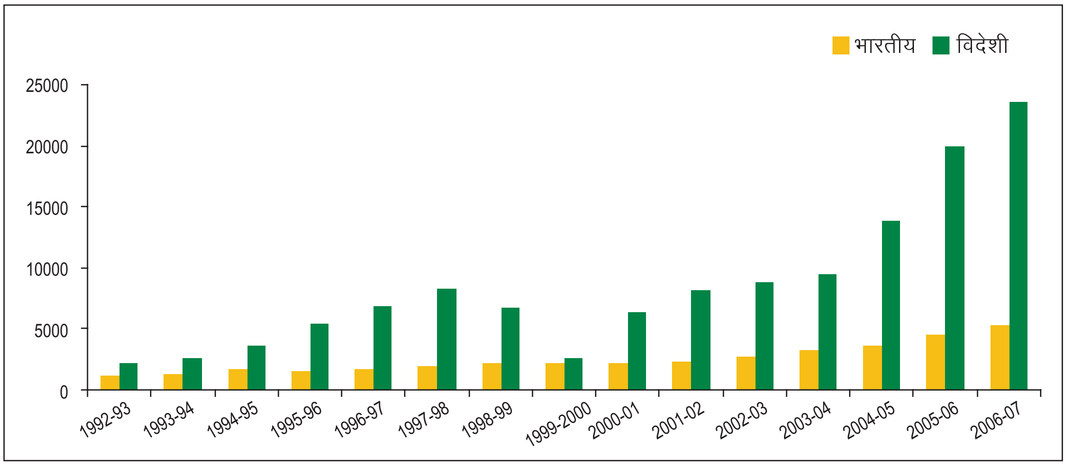

स्रोतः महानियंत्रक पेटेंट, डिजाइन, ट्रेडमार्क के कार्यालय की वार्षिक रिपोर्ट, भौगोलिक संकेत, बौद्धिक संपदा प्रशिक्षण संस्थान तथा पेटेंट सूचना प्रणाली 2006–07

चित्र 54: आविष्कारों के विभिन्न क्षेत्रों के अधीन पेटेंट के लिए दायर किए गए आवेदन–पत्र

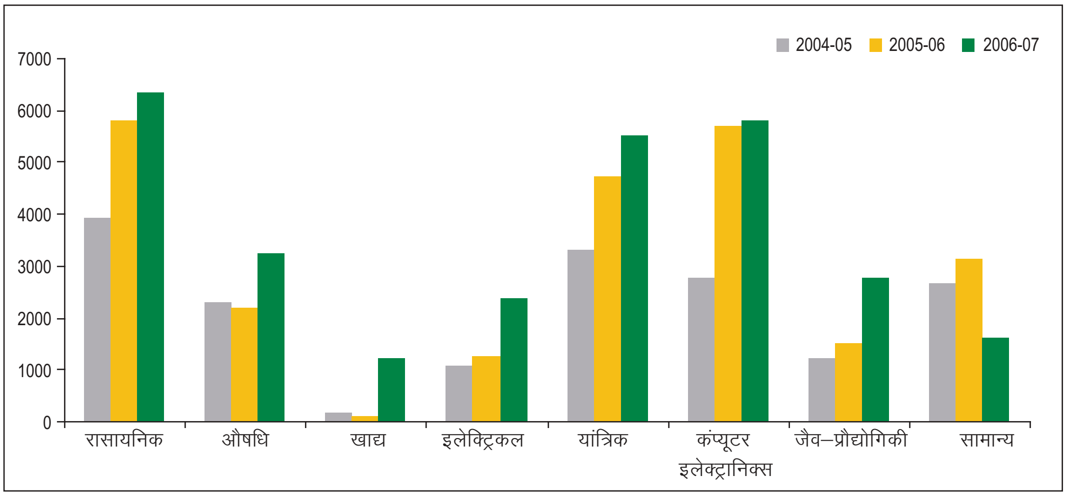

स्रोतः महानियंत्रक पेटेंट, डिजाइन, ट्रेडमार्क के कार्यालय की वार्षिक रिपोर्ट, भौगोलिक संकेत, बौद्धिक संपदा प्रशिक्षण संस्थान तथा पेटेंट सूचना प्रणाली 2006–07

चित्र 55: भारतीय पेटेंट आंकड़े (2005)

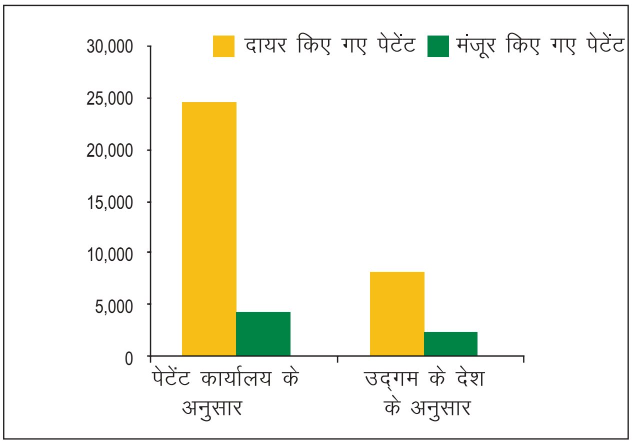

स्रोतः डब्ल्यूआईपीओ स्टैटिस्टिक्स डाटाबेस

अंतर्राष्ट्रीय तुलनाएं: पेटेंट फाइल करने और पेटेंटों की मंजूरी––दोनों दृष्टियों से भारत का स्थान शीर्षस्थ 20 पेटेंट कार्यालयों में आता है। यदि वर्ष 2006 के आंकड़ो पर दृष्टि डाली जाए (नीचे दिए गए डब्ल्यूआईपीओ रैंकिंग भारत के मामले में 2005 के आंकड़ों पर तथा अन्य देशों के मामले में 2006 के आंकड़ों पर आधारित हैं) तो भारत का स्थान और बेहतर हो जाता है। तो भी यदि जनसंख्या, जीडीपी तथा आर एंड डी व्यय के अनुपात के रूप में फाइल किए गए पेटेंटों पर विचार किया जाए––जोकि नवाचार के लिए एक बेहतर संकेतक है––भारत का निष्पादन विराशाजनक कहा जाएगा।

तालिका 21: पेटेंट कार्यालय द्वारा फाइल किए गए पेटेंट: शीर्षस्थ 20 कार्यालय, 2006

		2006
1	संयुक्त राज्य अमरीका	425966
2	जापान	408674
3	चीन	210501
4	कोरिया गणराज्य	166189
5	यूरोपीय पेटेंट कार्यालय	135231
6	जर्मनी	60585
7	कनाडा	42038
8	रूसी संघ	37691
9	आस्ट्रेलिया	26003
10	यूनाइटेड किंग्डम	25745
11	भारत (2005)	24505
12	ब्राजील	24074
13	फ्रांस	17249
14	मैक्सिको	15505
15	हांगकांग (एसएआर), चीन	13790
16	सिंगापुर	9163
17	इजरायल	7496
18	न्यूजीलैंड	7365
19	थाइलैंड	6248
20	नार्वे	6076

स्रोत: डब्ल्यूआईपीओ स्टैटिस्टिक्स डाटाबेस

तालिका 22: पेटेंट कार्यालय द्वारा मंजूर किए गए पेटेंट: 20 शीर्षस्थ कार्यालय, 2006

		2006
1	संयुक्त राज्य अमरीका	173770
2	जापान	141399
3	कोरिया गणराज्य	120790
4	यूरोपीय पेटेंट कार्यालय	62780
5	चीन	57786
6	रूसी संघ	23299
7	जर्मनी	21034
8	कनाडा	14972
9	फ्रांस	13788
10	मैक्सिको	9632
11	आस्ट्रेलिया	9426
12	यूनाइटेड किंग्डम	7907
13	सिंगापुर	7393
14	हांगकांग (एसएआर) चीन	5146
15	भारत (2005)	4320
16	यूक्रेन	3705
17	न्यूजीलैंड	3412
18	पोलैंड	2686
19	इजरायल	2584
20	ब्राजील	2465

स्रोत: डब्ल्यूआईपीओ स्टैटिस्टिक्स डाटाबेस

चित्र 56: प्रति मिलियन आबादी के पीछे आवासी पेटेंट फाइलिंग (2006)

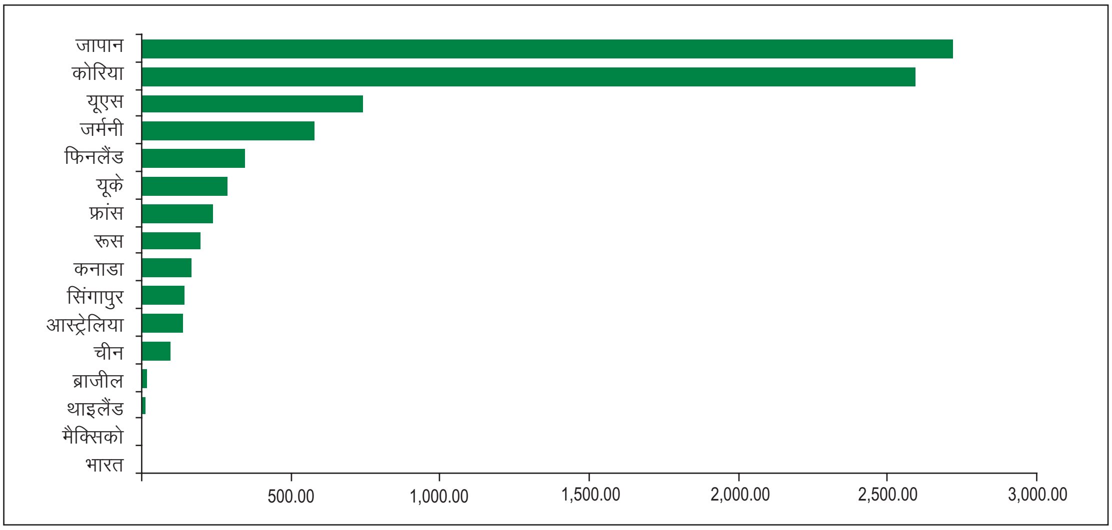

स्रोत: डब्ल्यूआईपीओ स्टैटिस्टिक्स डाटाबेस

चित्र 57: प्रति बिलियन जीडीपी के हिसाब से आवासी पेटेंट फाइलिंग (2006)

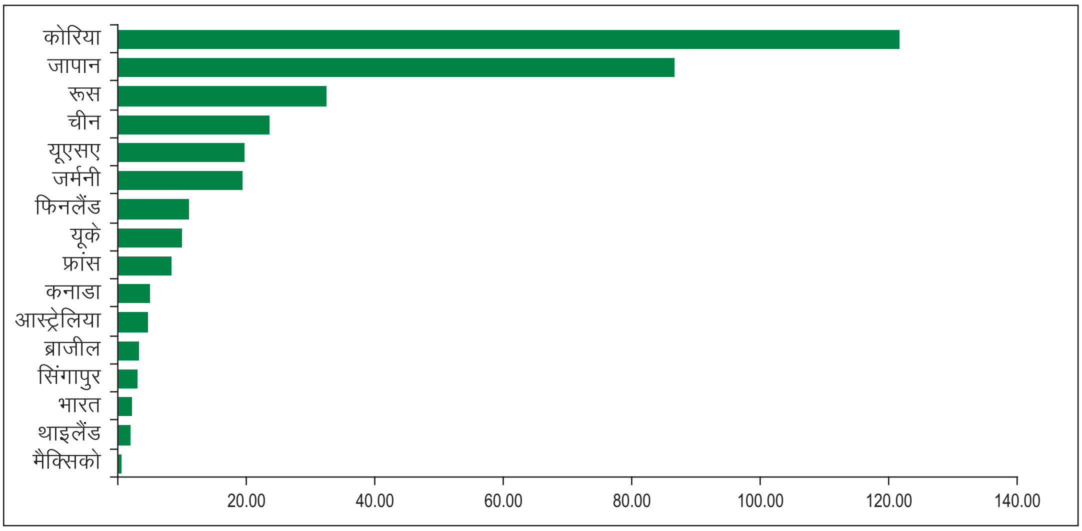

स्रोतः डब्ल्यूआईपीओ स्टैटिस्टिक्स डाटाबेस

चित्र 58: प्रति मिलियन आर एंड डी व्यय के हिसाब से आवासी पेटेंट फाइलिंग

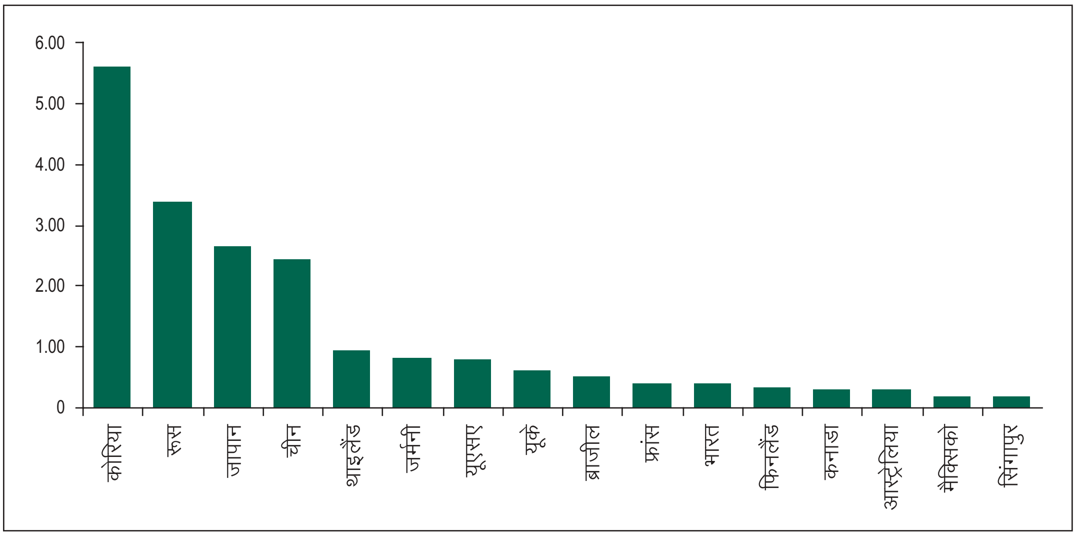

स्रोतः डब्ल्यूआईपीओ स्टैटिस्टिक्स डाटाबेस

उद्यमशीलता

प्रस्तावना

उद्यमशीलता को आर्थिक विकास का एक महत्वपूर्ण निर्धारक तत्व माना जाता है। नए उद्यमशीलता क्रियाकलाप *सृजनात्मक विनाश* की प्रक्रिया में जोकि नवाचार, रोजगार और उन्नति को प्रोत्साहित करती है एक महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वाह करते हैं। हालांकि भारत परंपरागत रूप से एक उद्यमशील देश रहा है लेकिन देशों की उद्यमशीलता और कारोबारी संभावना की खोज करने वाले अनेक वैश्विक अध्ययनों में उसका निष्पादन घटिया रहा है। उदाहरण के लिए वर्ल्ड बैंक डूइंग बिजनेस रिपोर्ट (2008) में जोकि कारोबारी क्रियाकलापों का संवर्द्धन करने के लिए विनियमनों का अन्वेषण करती है उसके अनुसार भारत का स्थान 178 अर्थव्यवस्थाओं में 120वां है। इसी प्रकार से वर्ल्ड इकोनामिक फोरम्स ग्लोबल कंप्टीटिवनेस इंडेक्स (2007) के अनुसार 131 देशों में भारत का स्थान 48वां है।

मौजूदा परिदृश्य

ग्लोबल इंटरप्रेन्योरशिप मानीटर (2007) की रिपोर्ट के अनुसार भारत की हाई ग्रोथ एक्सपेटेशन अर्ली–स्टेज इंटरप्रेन्योरशिप (एचईए) दर चीन से केवल 1/5वीं है। इसके अलावा मध्यम और अल्प आय वाले देशों में उदीयमान और नए उद्यमकर्ता सबसे अधिक वृद्धि–उन्मुखी प्रतीत होते हैं, उनमें से 10 प्रतिशत से अधिक उद्यमकर्ता उच्च वृद्धि की आशा करते हैं। भारत में अर्ली–स्टेज उद्यमशीलता क्रियाकलाप उन्नति की संभावना के न्यून स्तरों से ग्रस्त हैं। यह इस तथ्य के बावजूद है कि देश में गैर–उद्यमशीलता सक्रिय आबादी द्वारा संभावित उद्यमशील क्रियाकलाप के अत्यंत उच्च स्तर देखे जाते हैं।

यद्यपि उद्यमशीलता से संबंधित डाटा प्राप्त करना कठिन है, निम्न आंकड़े प्रभावपूर्ण हैं। एनएसएस के 62वें चक्र के अनुसार ग्रामीण भारत में सभी कामगारों में से लगभग 50 प्रतिशत स्वरोजगारयुक्त हैं––जिनमें से 57 प्रतिशत पुरुष और लगभग 62 प्रतिशत महिलाएं हैं, जबकि शहरी क्षेत्र में तदनुसार आंकड़े पुरुषों के मामले में 42 और महिलाओं के मामले में 44 है। एनएसएसओ *स्वरोजगारयुक्त* व्यक्ति को एक ऐसे व्यक्ति के रूप में परिभाषित करता है जिसने स्वयं अपने–खाते के कामगार की तरह से घरेलू उद्यमों में काम किया है; एक नियोक्ता के रूप में घरेलू उद्यमों में काम किया है अथवा एक सहायक के रूप में घरेलू उद्यमों में काम किया है। स्वरोजगार की एक अनिवार्य विशेषता यह है कि अपने कार्य करने में

चित्र 59: **कारोबार करने की सुगमता – वैश्विक दर्जा**

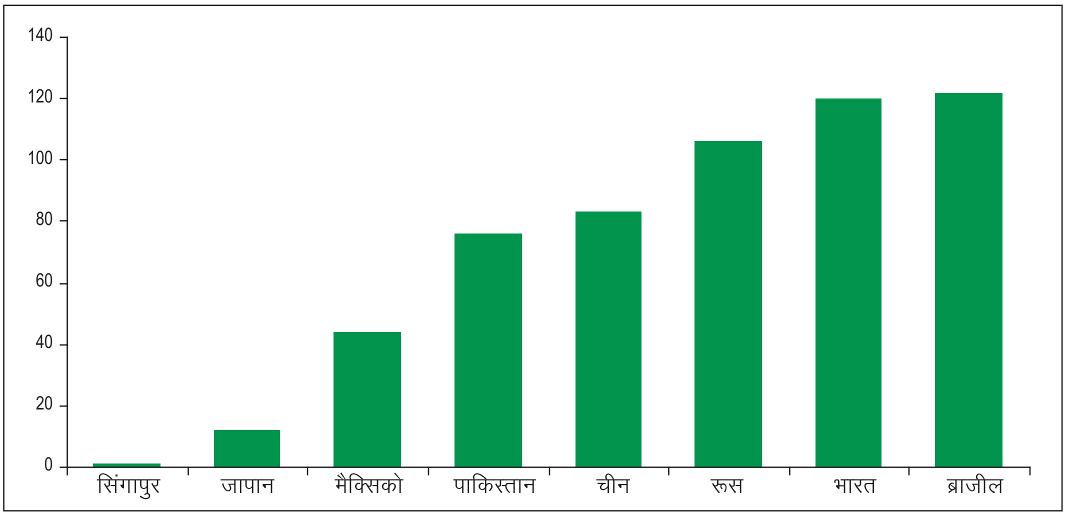

स्रोतः डूइंग बिजनेस 2008

चित्र 60: **समग्र और संभावित उद्यमशीलता क्रियाकलाप**

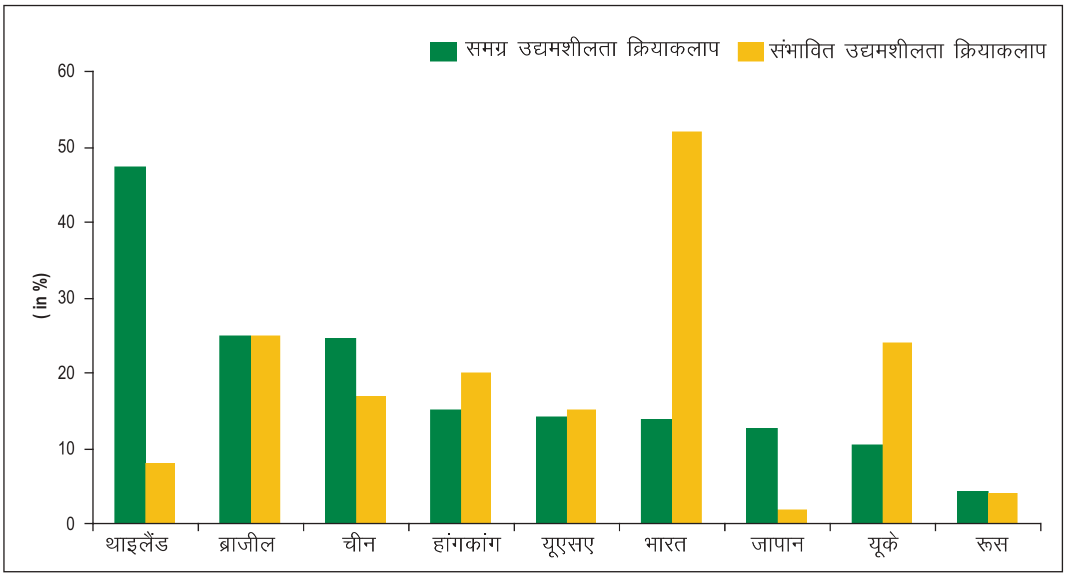

स्रोतः ग्लोबल इंटरप्रेन्योरशिप मानीटर 2007डवदपजवतए 2007

उसके पास स्वायत्तता (यह निर्णय लेना कि कैसे, कहां और कब उत्पादन किया जाए) तथा आर्थिक स्वतंत्रता (बाजार, प्रचालन की मात्रा और वित्त के संबंध में अपनी पसंद) होती है। केन्द्रीय सांख्यिकीय संगठन (सीएसओ) द्वारा आयोजित पांचवीं आर्थिक गणना के अनुसार देश में 41.83 मिलियन स्थापनाएं हैं जोकि फसल उत्पादन और पौधारोपण से इतर विभिन्न आर्थिक क्रियाकलापों में लगी हुई हैं। देश में कुल स्थापनाओं में से लगभग 50 प्रतिशत स्थापनाएं 5 राज्यों अर्थात तमिलनाडु (10.60 प्रतिशत), महाराष्ट्र (10.10 प्रतिशत), पश्चिम बंगाल (10.05 प्रतिशत), उत्तर प्रदेश (9.61 प्रतिशत) तथा आंध्र प्रदेश (9.56 प्रतिशत) में स्थित हैं। कुल रोजगार में लगभग 50 प्रतिशत का संयुक्त हिस्सा इन्हीं 5 राज्यों के अधीन है।

मौजूदा तंत्र में मुद्दे

वित्तः भारत में उद्यमकर्ताओं को जो प्रमुख समस्याएं पेश आ रही हैं उनमें ऋण की सुलभता एक समस्या है। यह समस्या विशेष रूप से प्रारंभिक अवस्था में गंभीर बन जाती है जब बैंक वित्त प्राप्त करना दुष्कर होता है। उद्यम पूंजी, एंजिल वित्तपोषण और निजी इक्विटी जैसे वित्त के नए स्रोतों के अधिकाधिक रूप से लोकप्रिय हो जाने के बावजूद संस्थानगत वित्त अभी भी मौजूदा उद्यमशीलता की मांगों को पूरा करने में समर्थ नहीं है।

विनियमन और अभिशासनः एक उद्यमकर्ता को अनेक विनियामक और अनुपालन मुद्दों के साथ निपटना होता है जिनमें ये शामिल हैः अपने कारोबार का पंजीकरण कराना, सरकार की अनापत्तियां और लाइसेंस प्राप्त करना, करों का भुगतान करना और श्रम विनियमनों का पालन करना। इस तरह के लेनदेन में जटिल कागजी काम, लंबी देरियां और लालफीताशाही उद्यमकर्ताओं के लिए अनावश्यक बोझ उत्पन्न कर देती है जिससे उनकी उत्पादकता तथा कारोबार करने की क्षमता बाधित हो जाती है। जैसाकि डूइंग बिजनेस 2008 क्रम–निर्धारणों से पता चलता है, इन संकेतकों में भारत का निष्पादन घटिया रहा है। जीईएम डाटा सेट का प्रयोग करते हुए उद्यमशीलता पर विनियमन के प्रभाव की जांच करने के लिए किए गए एक अध्ययन से यह पता चलता है कि भारत के सर्वाधिक निकृष्ट विनियामक सूचक हैं (देखें चित्र 61)। इसके अलावा किसी उद्यम को शुरू करने से संबंधित विधिक और क्रियाविधिक पक्षों संबंधी और साथ ही अनापत्तियों, लाइसेंसों और सरकारी स्कीमों से संबंधित जानकारी में स्पष्टता की कमी के कारण समस्या और अधिक गंभीर बन जाती है।

तालिका 23: **डूइंग बिजनेस 2008 में भारत का क्रम–निर्धारण**

कारोबार शुरू करना	111
लाइसेंसों से निपटना	134
कामगारों को रोजगार पर रखना	85
संपत्ति पंजीकृत कराना	112
करों का भुगतान करना	165
सीमाओं पर व्यापार	79
संविदाएं लागू करना	177
कारोबार बंद करना	137

स्रोतः डूइंग बिजनेस, विश्व बैंक 2008

चित्र 61: विनियामक सूचक

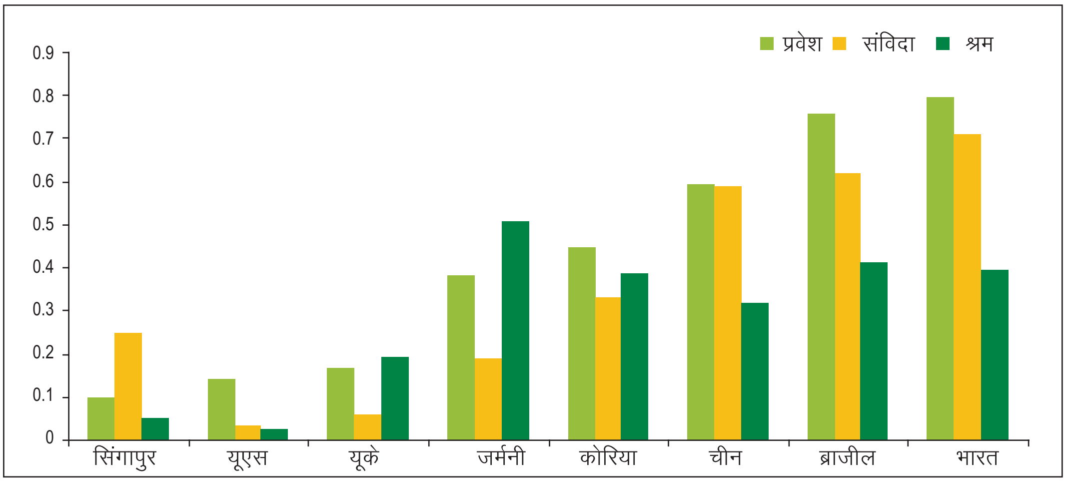

स्रोत: एक्सप्लेनिंग इंटरनेशनल डिफरेंसेज इन इंटरप्रेन्योरशिप: दि रोल आफ इंडिवीजुअल कैरेक्टरस्टिक्स एंड रेगुलेटरी कंस्ट्रेंट्स, सिलविया अरडागना तथा अन्नामेरिया लुसार्डी 2008

चित्र 62: 1–3 के मान पर कारकों का सापेक्ष महत्व

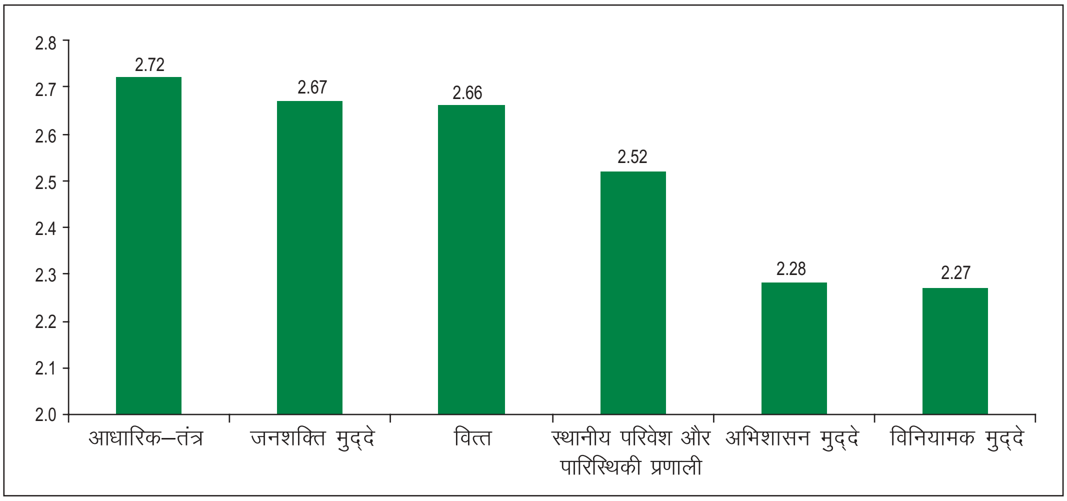

स्रोत: इंटरप्रेन्योरियल इंडिया, केपीएमजी–टीआईई रिपोर्ट 2008

जनशक्ति: उद्यमकर्ताओं के लिए कुशल जनशक्ति की उपलब्धता एक अन्य महत्वपूर्ण मुद्दा है। उदाहरण के लिए केपीएमजी तथा टीआईई द्वारा 2008 में किए गए उद्यमकर्ताओं के एक सर्वेक्षण से यह पता चला कि कुशल जनशक्ति उद्यमों की उन्नति को बढ़ावा देने के लिए दूसरा सबसे महत्वपूर्ण तत्व है। श्रम बाजार प्रभाविता और नमनशीलता लक्षित करने वाले अन्य प्राचल निराशापूर्ण हैं। डूइंग बिजनेस 2008 की रिपोर्ट के अनुसार नौकरी पर रखो और निकालो परिपाटियों में भारत का स्थान 102वां और कामगारों को रोजगार पर रखने में भारत का स्थान 85वां है।

आधारिक–तंत्र: भारत का आधारिक–तंत्र–सड़कें, रेल, बंदरगाह, विद्युत और दूरसंचार को भी उद्यमशीलता क्रियाकलाप के सुचारु प्रचालन में एक बाधा माना जाता है। घटिया आधारिक–तंत्र के साथ जो उच्च परिवहन और आपूर्ति श्रृंखला लागत जुड़ी होती है वह विशेष रूप से लघु और मझोले उद्यम में काफी सीमा तक प्रतियोगिता को प्रभावित कर सकती है। ग्लोबल कंपीटीटिवनेस रिपोर्ट 2007–08 में जिन उद्यमों का सर्वेक्षण किया गया था उसके अनुसार भारत में कारोबार करने के लिए अपर्याप्त आधारिक–तंत्र को ''सर्वाधिक समस्यापूर्ण कारक'' माना गया।

शिक्षा: हालांकि उद्यमशीलता पर शिक्षा का प्रभाव विवादपूर्ण माना जाता है फिर भी शिक्षा को अधिकाधिक रूप से विशाल पारिस्थिकी प्रणाली के एक अंग के रूप में समझा जाता है जो उद्यमशीलता और उद्यमशीलता प्रेरकों को प्रभावित करते हैं। उद्यमशीलता को बढ़ावा देने में और अधिक व्यावहारिक ज्ञानार्जन, सूक्ष्म विश्लेषण, उद्यमशीलता पाठ्यचर्या, उद्भवन तथा परामर्श, उद्योग–अनुसंधान संबंध सहायक हो सकते हैं।

टिप्पणी: बेसलाइन खंड में जो आंकड़े और सांख्यिकीय दिए गए हैं, जब तक कि अन्यथा न कहा गया हो वे, मानव संसाधन विकास मंत्रालय (एमएचआरडी, योजना आयोग, विश्वविद्यालय अनुदान आयोग (यूजीसी) तथा शिक्षा के लिए जिला सूचना प्रणाली (डीआईएसई) से लिए गए हैं।